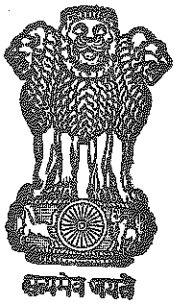

भारत का विधि आयोग

एक सौ ग्यारहवीं रिपोर्ट

घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855

मई 1985

न्यायमूर्ति के० क० मैथ्यू

अर्द्ध शा० सं० एफ० 2 (1)/85-एल० सी०
नई दिल्ली-110001
तारीख 16 मई, 1985

प्रिय मंत्री महोदय,

मैं इसके साथ विधि आयोग की एक सौ ग्यारहवीं रिपोर्ट भेज रहा हूं जो "घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855" के सम्बन्ध में है ।

विधि आयोग ने स्वप्रेरणा से इस विषय पर विचार किया है। इस विषय पर विचार करने की आवश्यकता को रिपोर्ट के पैरा 1.1 में स्पष्ट किया गया है ।

इस रिपोर्ट को तैयार करने में श्री पी० एम० बख्शी, अंशकालिक सदस्य और श्री एस० रमैय्या सदस्य सचिव ने जो मूल्यवान सहायता की है उसके लिए आयोग उनका आभारी है ।

सादर !

भवदीय

(के० के० मैथ्यू)

श्री ए०के० सेन
माननीय विधि और न्याय मंत्री,
नई दिल्ली

संलग्न---एक सौ ग्यारहवीं रिपोर्ट

85-M/B (D) 42—1 of LJ&CA—1

घातक दुर्घटना अधिनियम

विषय सूची

पृष्ठ

अध्याय

1. प्रस्तावना 1
2. इंगलैंड और अन्य देशों में विधि 5
3. नाम, विस्तार और लागू होना : धारा 1 7
4. प्रतिकर के लिए अधिकार : धारा 1क—पहला पैरा 8
5. प्रतिकर के लिए हकदार नातेदार : धारा 1क—दूसरा पैरा . . . 10
6. नुकसानी : धारा 1—क तीसरा पैरा 13
7. विधवा का पुनर्विवाह 15
8. वादों का बाहूल्य : धारा 2 19
9. प्रक्रिया : धारा 3 21
10. परिभाषाएं : धारा 4 23
11. नुकसानी में से कटौतियां 24
12. उत्तराधिकार प्रमाणपत्र 26
13. कार्य संचालन पत्र के बारे में प्राप्त आलोचनाएं 27
14. पुनरीक्षित अधिनियम के लिए की गई सिफारिश 28

परिशिष्ट

परिशिष्ट 1 : विधेयक के प्रारूप के लिए सिफारिश 29

परिशिष्ट 2 : सिफारिश किए गए विधेयक के प्रारूप में विद्यमान अधिनियम की धारा के तत्समान खंड दर्शित करने वाली तुलनात्मक सारणी 34

परिशिष्ट 3 : मृत्यु होने पर प्रतिकर का उपबंध करने वाले कतिपय काननी उपबन्धों की सूची . 35

अध्याय 1

प्रस्तावना

अधिनियम पर क्यों विचार किया गया ?

1.1 यह रिपोर्ट एक सौ साल पुराने उस अधिनियम के बारे में है जिसका नाम घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 है। यह अधिनियम किसी व्यक्ति की ऐसी मृत्यु के लिए प्रतिकर की वसूली के बारे में है जो किसी दूसरे व्यक्ति के "दोषपूर्ण कार्य उपेक्षा या व्यतिक्रम" से कारित हुई है। विधि आयोग ने विधियों का पुनरीक्षण करने के अपने कृत्य के रूप में इस विषय पर इसलिए विचार किया है कि अन्याय दूर किया जाए। न्यायिक विनिश्चयों में इस अधिनियम की कुछ त्रुटियां बताई गई हैं।[1] कुछ अन्य बातों के बारे में भी अधिनियम में कमियों का पता चला है और इस अधिनियम का, जो एक सौ साल पहले पारित किया गया था, पूर्ण रूप से पुनर्विलोकन करने की आवश्यकता उपर्युक्त त्रुटियों और कमियों की दृष्टि से एकदम स्पष्ट है।

न्यायिक विनिश्चय।

1.2 हम विद्यमान अधिनियम में त्रुटियों के उदाहरण के रूप में केवल एक मामले में[2] व्यक्त किये गए निम्नलिखित मत का उल्लेख कर रहे हैं :—

> "घातक दुर्घटना अधिनियम का, जिसे बहुत ही पहले 1855 में कानून बनाया गया था, रूप कुछ **पुराना और विषय वस्तु की दृष्टि से अप्रचलित है,** किन्तु न्यायालयों से इस कानून को लागू करने के लिए कहा जाता है। भारतीय अधिनियम को 1846 के इंगलिश कानून के आदर्श का अधिकांश रूप से अनुसरण करके बनाया गया है किन्तु भारतीय अधिनियम में **भाई और बहन** "आश्रितों" के श्रेणी के रूप में हकदार नहीं है, जब कि इंगलैंड में जो मातृदेश है। मेरा मतलब इस कानून की माता से है। **फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट,** 1959 की धारा 2 के अनुसार मृतक के भाई, बहन, अन्किल (चाचा) और आन्ट (चाची) तथा ऐसे नातेदारों की संतान को कानूनी आश्रित व्यक्तियों में सम्मिलित कर लिया गया है। हमारे देश में इंगलिश कानून के अन्य प्रगतिशील संशोधनों की भी नकल नहीं की गई है। हमें जिन तीन वादों से सरोकार है उनमें से एक वाद में अर्थात् ओ० एस० नम्बर 1965 का 22 में वादी 3, 4 और 6 मृतक के दो भाई और बहन हैं जो भारतीय अधिनियम के अधीन प्रतिकर का दावा करने के हकदार नहीं हैं। इसके अतिरिक्त घातक दुघटना अधिनियम, 1855 में यह कथन किया गया है कि "ऐसी प्रत्येक कार्यवाही या वाद उस व्यक्ति की, जिसकी मृत्यु इस प्रकार कारित हुई हो, पत्नी, पति, जनक और संतान, यदि कोई हो, के फायदे के लिए होगा और मृत व्यक्ति के निष्पादक, प्रशासक या प्रतिनिधि के द्वारा और नाम में लाया जाएगा।"

अधिनियम यह भी अपेक्षा करता है कि वाद पत्र में सभी आश्रितियों के नाम दिए जाएं। उस दशा में क्या होगा जब कि सभी आश्रित व्यक्ति सिविल तो हैं किन्तु अभिलेख (रेकार्ड) में नहीं है या जबकि आश्रित व्यक्तियों में से कुछ व्यक्ति वाद लाते हैं किन्तु जो दूसरे आश्रितों के फायदे के लिए नहीं हैं ? यदि यथार्थ रूप में कहा जाए तो इस धारा में प्रतिनिधित्व कार्यवाही की कल्पना की गई है किन्तु जहां वाद निष्पादक या प्रशासक द्वारा नहीं लाया जाता बल्कि हिताधिकारी कुछ व्यक्तियों द्वारा स्वयं वाद लाया जाता है तो क्या "वाद इस कारण खारिज कर दिया जाना चाहिए कि अन्य व्यक्ति अभिलेख में नहीं हैं ?" ऐसा दृष्टिकोण अपनाना अत्यंत तकनीकी होगा और दो वादों में, जिनमें जनक जीवित हैं, किन्तु उन्हें पक्षकार नहीं बनाया गया था (और उनकी ओर से दावा भी नहीं किया गया था) इस आधार पर आपत्ति की गई थी, जिसे विचारण न्यायालय ने ठीक ही नामंजूर कर दिया था, यद्यपि इसका यह अर्थ नहीं है कि वादियों को प्रतिकर का वह फायदा मिलना चाहिए जो जनक को उस दशा में मिलता जब कि वे (जनक) भी दावा किए होते।

ऊपर उद्धृत केरल के निर्णय में उल्लिखित त्रुटियों के अलावा अन्य कई त्रुटियां अधिनियम का विस्तारपूर्वक अध्ययन करने पर प्रकट होती हैं। हम आगे सम्यक् अनुक्रम में उनकी चर्चा करेंगे। ऐसा करने से पहले इस विषय के विधान की प्रकृति के बारे में कुछ कह देना उपयोगी होगा।

---

1. आगे पैरा 1.2।
2. पी. बी. कादर बनाम थत्तचम्मा ए.आई.आर. केरल, 241, 243।

मृत्यु का वाद-हेतुकों पर प्रभाव : दो पहलू ।

1.3 विचाराधीन विधान की प्रकृति मुख्यतया अपकृत्य (टार्ट) के क्षेत्र के अंतर्गत है (यद्यपि ऐसा अनन्य रूप में नहीं है), और इसका संबंध मृत्यु के प्रभाव के रूप में अपकृत्य का दायित्व सृजित करता है । यह बता देना उपयोगी होगा कि अपकृत्य की विधि में मृत्यु का प्रभाव दो विभिन्न रूपों में पड़ सकता है । मृत्यु से वाद-हेतुक समाप्त हो सकता है या वाद हेतुक सृजित हो सकता है । पहले पहलू का संबंध इस प्रश्न से है कि "दोषकृत व्यक्ति (जिस व्यक्ति के प्रति दोष किया गया है) या दोषकर्ता की मृत्यु हो जाने पर वाद-हेतुक कहां तक बचा रहता है ?" भारतीय कानून में इस विषय की चर्चा उत्तराधिकार अधिनियम में मुख्य रूप से की गई है ।[1] जिसमें यह उपबंधित है कि मृत्यु हो जाने पर अधिकांश वाद-हेतुक बचे रहते हैं ।

मृत्यु के दूसरे पहलू के संबंध में, अर्थात् मृत्यु हो जाने पर वाद-हेतुक का सृजित होना---इस प्रश्न पर विचार किया जाना है कि "किसी व्यक्ति को किसी दूसरे व्यक्ति के जीवन में कितना हित है जिससे की विधि दूसरे व्यक्ति की मृत्यु होने पर उसे वाद-हेतुक का अधिकार देती है ?" भारत में इस प्रश्न की चर्चा विचाराधीन अधिनियम में है, अर्थात् घातक दुघटना अधिनियम में दी गई है ।

उपर्युक्त दोनों प्रश्न तात्विक रूप में एक दूसरे से भिन्न हैं । पहला प्रश्न मुख्यतया प्रक्रियात्मक प्रकृति का है क्योंकि इसका संबंध विद्यमान वाद-हेतुक पर मृत्यु के प्रभाव से है । दूसरा प्रश्न मूल प्रकृति का है क्योंकि इसका संबंध नए वाद-हेतुक के सृजन से है । हमें वर्तमान अध्ययन में दूसरे प्रश्न से सरोकार है।[2]

मृत्यु के बारे में कामन ला का नियम ।

1.4 इस विशिष्ट प्रश्न के बारे में (क्या मृत्यु वाद-हेतुक का सृजन करती है) कामन ला में किसी मानव की मृत्यु किसी व्यक्ति के पक्ष में वाद-हेतुक सृजित नहीं कर सकती ।[3] यही स्थिति उस दशा में भी थी यदि मृत्यु कारित करने वाले व्यक्ति के दोषपूर्ण कार्य के परिणामस्वरूप मृत्यु हुई थी । अपकृत्य की विधि की सीमा मृत्यु हो जाने पर समाप्त हो जाती थी ।

घातक दुर्घटना के लिए वसूली नामंजूर करने वाले नियम का इतिहास ।

1.5 इस प्रकार से कामन ला की यह एक प्रसिद्ध विचित्रता थी कि मानव को दोषपूर्ण ढंग से जान से मार डालने के लिए अपकृत्य में कोई प्रतितोष प्राप्त नहीं किया जा सकता था । लार्ड उलनबरो द्वारा किए गए अतिकथन को ऐसे उपचार का विकास समाप्त करने के लिए जिम्मेदार समझा जाता था ।[4] किन्तु इस नियम की ठीक-ठीक उत्पत्ति जटिल और अस्पष्ट है ।[5]

जहां तक क्षतिग्रस्त (और इसके परिणामस्वरूप मृत) व्यक्ति का संबंध है, यह स्वाभाविक बात थी कि वह वास्तव में शारीरिक रूप में वाद नहीं ला सकता था और उसका अपना वाद-हेतुक---भले ही विधि ने उसे यह अधिकार दिया था---कामन ला में एक दूसरे नियम के लागू होने की दृष्टि से बचा नहीं रहता, अर्थात् व्यक्ति की मृत्यु होने पर उसका वैयक्तिक रूप से कार्यवाही करने का अधिकार समाप्त हो जाता है । किन्तु यह नियम अपने आप में उसके आश्रितों द्वारा प्रतिकर की वसूली की जाने से रोक नहीं सकता था । आश्रितों द्वारा प्रतिकर की वसूली उस नियम द्वारा रोक दी गई थी जो मृत्यु के लिए प्रतिकर दिलाए जाने को प्रतिषिद्ध करता था और जिसका वर्णन ऊपर किया गया है ।

कामन ला का नियम असमर्थनीय ।

1.6 कामना ला का उपर्युक्त नियम, जो दोषकर्त्ता को उस दशा में सिविल उन्मुक्ति प्रदान करता है जब कि क्षति से मृत्यु कारित हुई हो (निर्णय प्राप्त किए जाने से पहले) स्पष्ट रूप से असमर्थनीय है ।[6] यदि दोषपूण कार्य से ऐसी क्षति कारित होती है जिससे मृत्यु नहीं होती है तो प्रतिकर वसूल किया जा सकता है । यदि मृत्यु कारित करने वाले दोषपूर्ण कार्य को दायित्व से उन्मुक्त कर दिया जाता है तो इसका परिणाम यह होगा कि अधिक गंभीर अपहानि के लिए प्रतिकर नहीं मिलेगा जब कि कम गंभीर अपहानि के लिए प्रतिकर मिलेगा ।

---

1. भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 306 ।
2. आगे पैरा 1.10 भी देखिए ।
3. बेकर बनाम बोल्टन (1808) 1 कैम्प 493, 170 ई. आर. 1033 ।
4. (क) होल्डसवर्थ, "ओरिजिन आफ रूल में इन बेकर बनाम बोल्टन" 1916 (32, एल, क्यू, बी. 43) ।
   (ख) होल्डसवर्थ, एच. ई. एल. (1923) खंड 3, पृष्ठ 33 ।
5. मैलोन, "जैनेसिस आफ रांगफुल डेथ" (1966) 17 स्टैन. एल. रिव्यू, 1043 ।
6. नोट "इनएडिक्योसी आफ इकजीस्टिंग रांगफुल डेथ एंड सरवाइवल ले जिसलेशन" (1930-31) 44 हार. ला. रिव्यू 980 ।

1945 का इंगलिश ऐक्ट ।

1.7 इंगलैंड में इस असहनीय स्थिति के कारण फेंटल एक्सीडेंट ऐक्ट, 1845 (घातक दुर्घटना अधिनियम, 1845) पारित किया गया जिसे लार्ड कैम्पबेल के ऐक्ट के नाम से भी जाना जाता है ।[1] इस अधिनियम ने मृत्यु के लिए एक नया वाद-हेतुक मृतक के व्यक्तिक प्रतिनिधियों के पक्ष में सृजित किया जो अभिहित किए गए कुछ नातेदारों के फायदे के लिए है ।[2] इसने बेकार बनाम बोल्टन के मामले के नियम को समाप्त कर दिया ।[3] इंगलैंड में उत्तरवर्ती संशोधनों और अधिनियम के पुन: अधिनियम से अनेक बातें विस्तार से बताई गई किन्तु 1946 के अधिनियम के सिद्धांत को कायम रखा गया ।

1855 का भारतीय अधिनियम ।

1.8 1845 में इंगलिश फैटल एक्सीडेंट्स ऐक्ट पारित कर दिए जाने के पश्चात् भारतीय विधान-मण्डल ने 1855 में इस अधिनियम का अनुसरण किया । घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 इस अध्ययन का विषय है और इस अधिनियम में यह उपबंधित है कि किसी दूसरे व्यक्ति के "दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम" से किसी व्यक्ति की मृत्यु कारित होने पर मृतक का वैयक्तिक प्रतिनिधि मृतक की पत्नी, पति, जनक या सन्तान की ओर से नुकसानी के लिए कार्यवाही उस दशा में कर सकता है जब कि "दोषपूण कार्य; उपेक्षा या व्यतिक्रम" ऐसा है कि वह (यदि उससे मृत्यु कारित नहीं हुई होती तो) क्षतिग्रस्त पक्षकार को कार्यवाही करने और उसके बारे में नुकसानी वसूली करने के लिए हकदार बनाता ।

विधायी कार्यवाहियों का इतिहास ।

1.9 1855 के भारतीय अधिनियम को जिस विधेयक से कानून बनाया गया था उससे संबंधित कार्यवाहियों से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारंभ में यह प्रस्ताव[4] था कि 1845 के इंगलिश ऐक्ट का शब्दश: अनुसरण कर लिया जाए । ऐसा प्रतीत होता है कि जिस प्रवर समिति ने विधेयक के बारे में रिपोर्ट दी थी उसने विधेयक में कोई तात्विक परिवर्तन नहीं किया था ।[5] किन्तु प्रवर समिति ने विधेयक में ब्यौरे संबंधी बातों में कुछ परिवर्तन किया था । उदाहरण के लिए उसने विधेयक में उद्देशिका जोड़ दी और एक ऐसा उपबन्ध प्रविष्ट कर दिया जो वादी को सम्पदा की हानि के लिए दावा सम्मिलित करने के लिए समर्थ बनाता था । प्रवर समिति ने विधेयक के अंतिम खंड को भी परिवर्तित कर दिया जिसके द्वारा यह निदेश दिया गया कि दावे की प्रकृति की और उन व्यक्तियों की, जिनके फायदे के लिए दावा किया गया है, विशिष्टियों को भी वाद-पत्र में सम्मिलित करना चाहिए । प्रवर समिति ने यह मत प्रकट किया यह परिवर्तन मुफस्सिल न्यायालयों में प्रचलित पद्धति से संबंधित उपबन्धों को सम्मिलित करने के लिए किया गया है । प्रवर समिति ने कुछ अन्य शाब्दिक परिवर्तन करने के अलावा एक निर्वचन खंड भी जोड़ दिया । यह खंड 1845 के ब्रिटिश कानून से इस विषय के बारे में लिया गया किन्तु "जनक (पेरेन्ट)" शब्द का अर्थ सीमित कर दिया गया जिसको कि इसके अंतर्गत सौतेला-पिता या सौतेली-माता नहीं आ सकें ।

इस प्रकार दोषपूर्ण मृत्यु के वाद-हेतुक के लिए प्रभावकारी रूप से उपबन्ध किया गया है ।

दो हितों का अतिक्रमण ।

1.10 इस प्रक्रम पर यह उल्लेख कर देना चाहिए जब अपकृत्य से मृत्यु कारित होती है तब दो हित अन्तर्ग्रस्त होते हैं[6] :---

(i) पहला हित मृतक का उसके शरीर और संपत्ति की सुरक्षा का हित है----यह ऐसा हित है जिस पर आक्रमण उसे कष्ट सहन करने के लिए मजबूर करने और उपार्जन की हानि उठाने के लिए किया गया है ।

यदि इस हित पर आक्रमण के लिए प्रतिकर वसूल करने की इजाजत दी जाती है तो वसूल की जाने वाली रकम सम्पदा की वास्तविक आस्ति होनी चाहिए । इसकी संगणना मृतक को कारित अपहानि के अनुसार करनी होगी ।

---

1. फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1845
2. अब फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1975 देखिए जिसका 1982 में विस्तृत संशोधन किया गया है
3. पिछला पैरा 1.3
4. 1855 के अधिनियम 13 से संबंधित राष्ट्रीय अभिलेखागार के कागजपत्र
5. घातक दुर्घटना विधेयक, 1855 के संबंध में प्रवर समिति की [illegible] --2 फरवरी, 1855.
6. (1915) 28 हारवर्ड ला रिव्यू 802 में नोट देखिए

(ii) दूसरा हित जिसका अतिक्रमण किया गया ह वह मृतक के नातेदारों का हित है—यह हित प्रत्याशा के रूप में है, मृतक के जीवन का अंत हो जाने से मृतक के भविष्यलक्षी उपार्जन में हिस्सा पाने का पूर्वानुमान अवश्य ही समाप्त हो जाता है। इस मद में वसूल की जाने वाली रकम संपदा की आस्ति नहीं है ।

प्रथम प्रकार के हित की संरक्षा तभी की जा सकती है जब कि उस वाद-हेतुक को, जो मृतक को उसकी मृत्यु से पहले प्रोदभूत हुआ था, उत्तरजीवित (बचाए) रखने के लिए उपबन्ध हो ।[1]

घातक दुर्घटना अधिनियम की प्रकृति का कानून केवल द्वितीय प्रकार के हित की संरक्षा करेगा ।[2]

घोर अपराध का अपकृत्य (फिलोनिअस टार्ट) ।

1.11 इस बात का उल्लेख कर देना भी समुचित है कि कामन ला में एक अन्य नियम था जो घोर अपराध के अपकृत्य के लिए प्रतिकर की वसूली को रोक देता था – यह नियम मृत्यु कारित करने वाले अपकृत्य तक ही सीमित नहीं था । यह नियम स्मिथबनाम सैलवीन[3] में फिलिमोर एल० आर० के निर्णय में तिष्ठित किया गया था जिसमें से निम्नलिखित उद्धरण लिया गया है :–

"विधि का यह सुस्थापित नियम है कि प्रतिवादी द्वारा जिस वादी के विरुद्ध घोर अपराध किया गया है वह वादी उस घोर अपराध को तब तक वाद-हेतुक का आधार नहीं बना सकता जब तक कि प्रतिवादी अभियोजित न किया गया हो या उसे अभियोजित न करने के लिए उचित कारण दर्शित न किया गया हो ।" यहां यह उल्लेख कर देना चाहिए कि इंगलैंड में कामन ला का उपर्युक्त नियम कानून द्वारा समाप्त कर दिया गया है ।[4] कई अन्य देशों में भी इस नियम को स्पष्ट उपबन्ध द्वारा समाप्त कर दिया गया है । कनाडा में इस विषय[5] के संबंध में उपबंध निम्नलिखित रूप में है[6] "केवल इस तथ्य के कारण कि कोई कार्य या लोप घोर अपराध होता है, उस कार्य या लोप के लिए सिविल उपचार निलम्बित नहीं किया जाएगा या उसके संबंध में की गई कार्यवाही नहीं रोकी जाएगी ।"

कार्य संचालन-पत्र ।

1.12 आयोग ने इस विषय पर विचार करने को सुगत बनाने की दृष्टि से एक कार्यसंचालन पत्र[7] तैयार किया था जिसमें आयोग ने हितबद्ध व्यक्तियों और निकायों के इस विषय के बारे में राय जानने के लिए प्रयोगात्मक प्रस्ताव रखे थे । इस रिपोर्ट में कार्य संचालन पत्र के बारे में प्राप्त आलोचनाओं की चर्चा समुचित स्थान पर की जाएगी ।[8]

---

1. (1915) 28 हारवर्ड ला रिव्यू 902 में नोट देखिए
2. पिछला पैरा 1.3 भी देखिए ।
3. स्मिथ बनाम सैलवीन (1914) 3 के.बी. 98, 106 (सी.ए.)
4. ब्राह्म, "फैलोनिअस टार्ट स्टाल" (1965) 3 आस्ट. एल. जे. 164
5. क्रिमिनल ला ऐक्ट, 1967 (इंगलैंड) की धारा 1
6. कैनेडियन क्रिमिनल कोड की धारा 19
7. विधि आयोग की फाइल सं. एफ 2(1) 85 एल. सी. घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 के बारे में कार्य संचालन पत्र (जनवरी 1985)
8. आगे अध्याय 13.

अध्याय 2

इंगलैंड और अन्य देशों में विधि

इंगलैंड में सुधार ।

2.1. जैसा कि पहले कहा गया है भारतीय अधिनियम मुख्यतया 1846 के इंगलिश ऐक्ट के आदर्श पर बनाया गया है । किन्तु इंगलैंड में इस विषय से संबंधित विधि में अनेक सुधार किए गए हैं । ऐसे सुधार की प्रक्रिया आनुक्रमिक रही है । 1976 तक कानूनी उपबंधों को विधि का सुधार करने के लिए समय-समय पर पारित अनेक अधिनियमितियों में से संग्रहीत करना पड़ा था । 1976 में विधि को फैटल एक्सीडेन्टस ऐक्ट, 1976 के रूप में समेकित किया गया । 1982 में 1976 के ऐक्ट की प्रथम चार धाराओं के स्थान पर नई धाराएं एडमिनिस्ट्रेशन आफ जस्टिस ऐक्ट, 1982 (सी० 53) द्वारा रखी गई । इसके परिणामस्वरूप अब इस विषय के बारे में अभिनिश्चित करने के लिए 1976 के ऐक्ट और 1982 के ऐक्ट अर्थात् दोनों ऐक्टों को पढ़ना पड़ेगा ।

इंगलैंड की स्थिति के बारे में कुछ मुख्य बातें ।

2.2. इंगलैंड में विधायी विकास की कुछ मुख्य बातों की ओर ध्यान दिलाना उपयोगी होगा—

(क) जहां कि प्रतिवादी के अपकृत्य से मृतक की मृत्यु दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम द्वारा कारित हुई है वहां फैटल एक्सीडेन्टस ऐक्ट प्रतिवादी को इस बात के लिए मजबूर करता है कि वह विनिर्दिष्ट आश्रितों को मृतक से मिलने वाली सहायता की हानि के लिए प्रतिकर दे परन्तु जब कि मृतक (यदि वह जीवित रह जाता तो) प्रतिवादी के विरुद्ध स्वयं वाद लाने के योग्य होता ।

(ख) मृतक का निष्पादक या प्रशासक कार्यवाही करता है किन्तु आश्रितों की ओर से वसूल की गई नुकसानी को अपने पास रखता है । यदि निष्पादक या प्रशासक ने मृतक की मृत्यु होने के समय से छह मास के अंदर कार्यवाहियां शुरू नहीं की हैं तो ऐक्ट के अधीन हकदार कोई भी आश्रित अपने नाम में कार्यवाहियां कर सकता है । यह धन मृत्यु शुल्क (डेथ ड्यूटी) या मृतक के लेनदारों के दावों के कारण कम नहीं हो जाता क्योंकि यह धन मृतक की सम्पदा में नहीं जाता है ।

(ग) ऐक्टों (अधिनियमों) के अधीन हकदार "आश्रितों" के अंतर्गत पति या पत्नी, भूतपूर्व पति या पत्नी, सन्तान या अन्य आश्रित व्यक्ति, सौतेली सन्तान, जनक, सौतेले जनक, या अन्य पूर्वज, भाइयों, बहनों, आन्ट्स या आन्किल्स और आन्ट्स और अन्किल्स की संतानें हैं । कतिपय वास्तविक नातेदारों को भी मान्यता दी गई है ।

(घ) इन नातेदारियों में से कोई भी नातेदारी दत्तक ग्रहण से या विवाह (विवाह-सम्बन्ध) (मैरिज एफिनीटी) से उत्पन्न हो सकती है और नातेदारी अधर्मज या अर्ध रक्त की हो सकती है । ["अर्ध रक्त" के नातेदार ऐसे व्यक्ति होते हैं जो एक ही पूर्वज के आधार पर नातेदार हैं किन्तु उसी पूर्वज के भिन्न पति या पत्नी से अवजनित हैं] ।

(ङ) ऐसे मामले में नुकसानी का परिमाण उस हद तक है जिस हद तक नातदार आश्रित है और जो उसके आश्रित रहने की निरंतर जारी रखने वाली संभाव्य अवधि से गुणा करके बनाता हो ।

(च) मृतक की मृत्यु के परिणामस्वरूप नातेदार को प्रोद्भूत होने वाले फायदों को नुकसानी का निर्धारण करने के हिसाब में नहीं लिया जाएगा ।

(छ) प्रतिवादी से एक ही दोषपूर्ण कार्य के बारे में दुबारा नुकसानी का भुगतान नहीं कराया जाएगा । अतः जब निष्पादक दोनों ऐक्टों के अधीन अर्थात् ला रिफार्म आदि ऐक्ट, 1934 और फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट के अधीन प्रतिवादी के विरुद्ध वाद लाता है तब प्रत्येक ऐक्ट के अधीन दिलवाई गई नुकसानी की संगणना दूसरे ऐक्ट[1] के अधीन दिलवाई गई नुकसानी के सन्दर्भ में की जाएगी जिससे कि दिलवाई गई कुल नुकसानी में द्विगुणीकरण न हो (अर्थात् नुकसानी दो बार न दिलवाई जाए) ।

---

1. रोज बनाम फोर्ड (1937) ए० सी० 826 (1937) 3 आल ० आर० 359 (एच० एल०)

1982 का इंगलिश ऐक्ट।

2.3. इंगलैंड में[1] अभी हाल ही में अधिनियमित 1982 के एडमिनिस्ट्रेशन आफ जस्टिस ऐक्ट द्वारा 1976 के ऐक्ट की धारा 1 से धारा 4 तक की धाराओं के स्थान पर पुनरीक्षित धाराएं रखी गई हैं। इस पुनरीक्षण के अनुक्रम में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन भी कर दिए गए हैं। अब इस ऐक्ट के प्रयोजन के लिए ऐसी स्त्री को भी, जिसे वास्तव में "पत्नी" कहा जा सकता है "आश्रित" मानने के लिए उपबन्ध किया गया है। मृतक की भूतपूर्व पत्नी या उसके भूतपूर्व पति को भी "आश्रित" की श्रेणी में होने का अधिकार दिया गया है। इस पूर्वतर उपबन्ध को कि आश्रितों को प्रोद्भूत होने वाला बीमा और अन्य फायदे हिसाब में नहीं लिए जाएंगे अब व्यापक बना दिया गया है। वास्तव में न्यायालय ऐसे किसी फायदे को, जो मृत्यु होने पर आश्रित को प्रोद्भूत होता है, हिसाब में (कटौती के रूप में) लेने से वर्जित है। विधान के सामाजिक न्याय के पहलू को बढ़ाने के लिए भी कुछ अन्य परिवर्तन किए गए हैं। कुछ ऐसी विषमताओं को दूर करने का भी प्रयास किया गया है जो ऐक्ट के अधीन दावा करने और कम वर्ष तक जीवित रहने की आशंका के लिए दावा करने के सहअस्तित्व के कारण उत्पन्न होती हैं। शोकावस्था के लिए नुकसानी दिलवाने के लिए भी उपबन्ध किया गया है –सम्भवतः यह विचार स्काटलैंड की विधि द्वारा प्रेरित है।[2]

कामनवेल्थ (राष्ट्र-मण्डल) के अन्य देशों में विधि।

2.4. कामनवेल्थ के अधिकांश देशों में भी इस विषय से संबंधित विधि मुख्यतया इंगलिश पैटर्न के आदर्श पर बनायी गई हैं।

अमरीका में स्थिति।

2.5. अमरीका के बहुसंख्यक राज्यों के लिखित कानून में मृत्यु के प्रतिकर के लिए उपबन्ध सारभूत रूप से इंगलिश ऐक्ट के तरीके पर ही है। शब्दावली में अंतर है किन्तु सार एक ही है।[3]

तोषण (सलेशिअम) के बारे में स्काटलैंड की विधि।

2.6. स्काटलैंड में भी शोकग्रस्त कुटुम्ब को तोषण के लिए और अवलम्ब की हानि के लिए भी नुकसानी दिलायी जाती है।[4] लार्ड वाटसन ने यह मत प्रकट किया है कि स्काटलैंड में एक शताब्दी से पति या पत्नी, जनक या संतान को तोषण और नुकसानी दिलाए जाने के लिए कार्यवाही करने की इजाजत है।[5] यह पहले ही उल्लेख कर दिया गया है कि 1982 में यथासंशोधित इंगलिश ऐक्ट अब शोकावस्था के लिए नुकसानी दिलवाता है।[6]

सिविल विधि वाले देश।

2.7. आधुनिक सिविल विधि की अधिकारिता वाले देशों में, जैसे फ्रांस में, जिसकी विधि पर रोमन विधि का अत्यधिक प्रभाव है, न्यायालयों ने मृतक के कुटुम्ब को उसकी मृत्यु से होने वाली धन की हानि या धन रहित हानि के लिए नुकसानी दिलवाने में प्रारंभ से ही किसी कठिनाई का सामना नहीं किया।[4]

1. दि एडमिनिस्ट्रेशन आफ जस्टिस ऐक्ट, 1982 (इंगलैंड)।
2. आगे पैरा 2.7 देखिए।
3. (1964-65) 17 स्टैनफोर्ड ला रिव्यू में नो, पृष्ठ 1054–1055।
4. (1964-65) खंड 17 स्टैनफोर्ड ला रिव्यू में नोट, पृष्ठ 1054–1055।
5. क्लार्क्स बनाम कारपिन कोल कम्प. ए. सी. 412, 418 (एच. एल.)।
6. पिछला पैरा 2.3 देखिए।

अध्याय 3

नाम, विस्तार और लागू होना : धारा 1

धारा 1

विस्तार और लागू होना–सिफारिश।

3.1. अब हम घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 की जांच धाराक्रम के अनुसार कर सकते हैं

3.2. अधिनियम की धारा 1 में अधिनियम के (राज्यक्षेत्रीय) विस्तार की चर्चा है। इस विशेष बात के लिए कोई परिवर्तन आवश्यक नहीं है। किन्तु यदि वर्तमान अधिनियम के स्थान पर नया अधिनियम रखा जाना है (जैसा कि हम सिफारिश कर रहे हैं) तो नए अधिनियम में एक यह उपबंध अन्तःस्थापित करना समुचित होगा कि इस अधिनियम के उपबन्ध भूतलक्षी रूप से लागू नहीं होंगे।[1] इस विषय पर विवाद से बचना बेहतर होगा। इस विशेष बात को धारा 1 में और निरसन खंड में भी अंतःस्थापित किया जा सकता है।[2] हम तदनुसार सिफारिश कर रहे हैं। इसी प्रसंग में यह बता दिया जाए कि "घातक दुर्घटना" का नाम, समुचित नहीं है और इसके स्थान पर अधिक समुचित शब्दों "दोषपूर्ण मृत्यु" को रखना चाहिए।

1. परिशिष्ट 1, खंड 1 (3) देखिए।
2. परिशिष्ट 1, खंड 14 (2)।

अध्याय 4

प्रतिकर के लिए अधिकार : धारा 1क—पहला पैरा

धारा 1क, पहला पैरा।

4.1. धारा 1क अधिनियम की प्रवर्तनीय प्रधान धारा है और मृत्यु से हुई हानि के लिए वाद फाइल करने के लिए समर्थ बनाती है। विनिर्दिष्ट नातेदारों द्वारा वाद फाइल किया जा सकता है। इस धारा में ब्यौरे की कुछ अन्य बातों की भी चर्चा की गई है। धारा के विभिन्न पैरों में से एक-एक पैरा की चर्चा करना सुगम होगा।

धारा 1 का पहला पैरा निम्नलिखित रूप में अधिनियमित करता है :—

"1क. जब कभी किसी व्यक्ति की मृत्यु दोषपूर्ण कार्य, अपेक्षा या व्यतिक्रम से कारित हो और वह कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम ऐसा हो जिससे (यदि मृत्यु न हुई होती) क्षत व्यक्ति उसकी बाबत कार्यवाही चलाने और नुकसानी वसूल करने का हकदार होता तो पक्षकार, जो मृत्यु न होने की दशा में दायी होता। इस बात के होते हुए भी कि क्षत व्यक्ति की मृत्यु हो गई है और यद्यपि मृत्यु ऐसी परिस्थितियों में कारित हुई है जिनसे विधि के अनुसार घोर अपराध या अन्य अपराध बनता हो, नुकसानी के लिए कार्यवाही या वाद के दायित्वाधीन होगा।"

कार्यवाही करने के अधिकार के लिए शर्तें।

4.2 पहले पैरा के संदर्भ में यह बात नोट करने की है कि इस धारा के अधीन वाद लाने के पहले दो शर्तें आवश्यक हैं :—

(i) मृत्यु "दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा, या व्यतिक्रम" से अवश्य कारित हुई हो; और

(ii) कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम अवश्य ही ऐसा होना चाहिए (यदि मृत्यु कारित नहीं हुई है तो) जिससे क्षत पक्षकार कार्यवाही करने और उसके बारे में नुकसानी वसूल करने का हकदार होता।

इन शर्तों को जब एक साथ पढ़ा जाता है तब यह परिकल्पना की जाती है कि यदि मृत्यु के लिए वसूली प्रतिषिद्ध करने वाला नियम नहीं होता तो जिस कार्य से मृत्यु कारित हुई है उसके बारे में कार्यवाही की जा सकती थी। किन्तु इस धारा के अधीन कार्यवाही करने का अधिकार एक नया अधिकार है और मृतक का बचा हुआ वाद-हेतुक नहीं है। यह अधिकार केवल इस विस्तार तक "व्युत्पन्न" होता है कि मृतक को लागू होने वाली पूर्व शर्तें अवश्य ही विद्यमान हैं।[1]

संविदा का भंग—इसके बारे में स्थिति।

4.3. दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम शब्दों के बारे में यह कह देना चाहिए कि अधिनियम के अधीन अधिकांश मामलों में वाद-हेतुक अपकृत्य के अंतर्गत है। इंगलैंड में (1946 के ऐक्ट के संदर्भ में) यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संविदा का भंग कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त होगा।[2] इंगलिश उपबंध[3] की भाषा और भारतीय उपबन्ध की भाषा इस बारे में सारवान रूप में समान होने से हमारे न्यायालयों से यह आशा की जा सकती है कि उपर्युक्त बात के बारे में वैसा ही दृष्टिकोण अपनाएंगे। वास्तव में बेकर बनाम बोल्टन का नियम (जिसे फैटल एक्सीडेन्टस ऐक्ट द्वारा अतिष्ठित करना आशयित है)[4] स्वतः संविदा के भंग को लागू नहीं होता।[5]

आस्ट्रेलिया का मामला।

4.4. आस्ट्रेलिया में सारवान रूप में इसी प्रकार के विधान के अधीन एक मामले में एक माता ने अपने उस पुत्र की मृत्यु के लिए, जिसने प्रतिवादियों से बिजली का एक खराब बल्ब खरीदा था जिसके कारण बिजली लगने से उसकी मृत्यु हो गई थी, नुकसानी वसूल की थी। खुदरा बिक्री करने वालों की उपेक्षा साबित नहीं हो सकी थी किन्तु बल्ब के ठीक होने की विवक्षित वारन्टी भंग हुई थी जिससे मृतक को वाद हेतुक का अधिकार मिल सकता था।[6]

1. विलियम्स, "सम रिफार्म्स इन ला आफ टार्ट्स" (1961) 24 माडर्न एल. आर. 100, 106 देखिए।
2. **ग्रीन** बनाम **इम्पीरियल एयरवेज लि.** (1936) 2 आल ई. आर. 1258।
3. अब 1976 के ऐक्ट की धारा 1(1) देखिए।
4. पिछला पैरा 1.3 और पैरा 1.7।
5. **फास्ट** बनाम **एड्सबरीडेयरी कम्प.** (1915) 1 के. बी. 608।
6. **वूलवर्क्स** बनाम **काटी** (1942) 66 सी. एल. आर. 603।

कारणत्व।

4.5. जिस दोषपूर्ण आचरण का अवलम्बन किया जाता है उसके और उससे कारित मृत्यु के बीच संबंध की प्रकृति के बारे में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दोषपूर्ण आचरण को मृत्यु का प्रत्यक्ष या एकमात्र कारण होना आवश्यक नहीं है किन्तु ऐसा आचरण मृत्यु कारित करने वाले कारणों में से आवश्यक ही एक कारण होना चाहिए।[1]

धारा 1क के पहले पैरा में शाब्दिक परिवर्तन—सिफारिशें।

4.6. धारा 1क के पहले पैरा में किसी सारवान् परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। किन्तु कुछ शाब्दिक परिवर्तन अपेक्षित हैं। शब्दों के वर्तमान प्रचलित प्रयोग को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित परिवर्तन किए जाने चाहिए—

(i) "कार्यवाही" शब्द के स्थान पर "वाद" शब्द रखना चाहिए, और

(ii) "घोर अपराध या अन्य अपराध" शब्दों के स्थान पर "अपराध" शब्द रखना चाहिए

हम तदनुसार सिफारिश कर रहे हैं। (इंगलिश) फैटल एक्सीडेंट्स ऐक्ट, 1976 की धारा 1 (1) पर मुख्यतया आधारित कुछ अन्य मामली शाब्दिक सुधार भी वांछनीय है[1]। ये सब रिपोर्ट के परिशिष्ट में सिफारिश किए गए विधेयक के प्रारूप में दर्शित हैं।

1. **गवर्नर-जनरल आफ इंडिया इन कौन्सिल** बनाम **भगवारी देवी**, ए. आई. आर. इला. 14, 18 पैरा 48।

अध्याय 5

प्रतिकर के लिए हकदार नातेदार : धारा 1क–दूसरा पैरा

धारा 1क, दूसरा पैरा—प्रतिकर के लिए हकदार नातेदार ।

5.1. 1855 के अधिनियम की धारा 1क का दूसरा पैरा निम्नलिखित रूप में है:—

"ऐसी प्रत्येक कार्यवाही या वाद उस व्यक्ति की, जिस की मृत्यु इस प्रकार कारित हुई हो, पत्नी, पति, जनक और संतान, यदि कोई हो, के फायदे के लिए होगा, और मृत व्यक्ति के निष्पादक, प्रशासक या प्रतिनिधि के द्वारा और नाम में लाया जाएगा।"

इस प्रकार इस पैरा में दो बातों की चर्चा है —

(i) प्रतिकर के लिए हकदार नातेदार– जो मूल बात है; और

(ii) कार्यवाही का रूप–जो प्रक्रिया संबंधी बात है।

प्रतिकर के लिए हकदार नातेदार ।

5.2. पहली बात के बारे में (प्रतिकर के लिए हकदार नातेदारों के बारे में) वर्तमान उपबन्ध पत्नी, पति, जनक और सन्तान के लिए ही सीमित है। प्रत्यक्षतः यह परिधि बहुत छोटी प्रतीत होती है। इस प्रसंग में यह बात नोट करनी चाहिए कि इंगलैंड में नातेदारों के प्रवर्ग का विस्तार कर दिया गया है। अब इंगलैंड में विधि जिस रूप में है[1] उसके अंतर्गत निम्नलिखित व्यक्ति भी हैं—

(क) पत्नी, पति,[2] जनक और सन्तान[3];

(ख) ऐसा कोई व्यक्ति जो मृत व्यक्ति का भाई है, बहन, अन्किल या आन्ट है या उसकी सन्तान है।[3]

(इंगलैंड में और भारत में भी "जनक" और "संतान" शब्दों की परिभाषा व्यापक रूप में की गई है)।

अधर्मज और दत्तक सन्तान—इंगलैंड में स्थिति ।

5.3. इंगलैंड में अनेक प्रवर्गों के अधर्मज आश्रितों और सौतेली सन्तान को भी सम्मिलित किया गया है। दत्तक सन्तान को इंगलैंड मे एक साधारण अधिनियमिति द्वारा सम्मिलित किया गया है। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि उक्त अधिनियमिति के अधीन स्थिति यह है कि विधि में दत्तक संतान को वैसा ही माना जाता है मानों उसने विवाह हो जाने से जन्म लिया है।[4]

प्रतिकर के लिए हकदार नातेदारों का विस्तार—विस्तार करने का प्रस्ताव ।

5.4. (क) यह बात नोट करने की है कि भारत में कर्मकार प्रतकर अधिनियम[5] और रेल अधिनियम[6] के भी अधीन बहनों और भाइयों को आश्रितों के रूप में मान्यता दी गई है। हमारे विचार से इंगलैंड में नातेदारों की जो अधिक व्यापक सूची अपनायी गई है[7] वह भारत के लिए भी उपयुक्त है। फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट के प्रसंग में अन्किलस, और आन्ट्स, भाइयों और बहनों तथा उनकी संतान को भी सम्मिलित करना चाहिए।

(ख) वास्तव में भारतीय भावनाओं को ध्यान में रखकर मृतक के साथ रहने वाली विधवा पुत्रवधु को भी सम्मिलित कर लेने की गुंजाइश है। ऐसे मामले असामान्य नहीं हैं जिनमें ऐसी विधवा पुत्रवधु जिसे आय का स्वतंत्र साधन नहीं प्राप्त है, उस श्वसुर पर आर्थिक रूप से आश्रित थी जिसकी मृत्यु क्षति के परिणामस्वरूप हुई है। इंगलैंड में भी[8] इस विषय के बारे में प्रस्तावित विधान के वाद-विवाद में यह सुझाव दिया गया था कि विधवा पुत्रवधु और सास को भी सम्मिलित कर लेना चाहिए, यद्यपि ऐस

1. फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1976 (इंगलिश)।
2. विच्छिन्न विवाह पत्नी या पति, आगे पैरा 5.7 देखिए।
3. फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1976 (इंगलिश) की धारा 1 (3)।
4. चिल्ड्रेन ऐक्ट, 1975 (सी. 72) (इंगलिश) की प्रथम अनुसूची, पैरा 3।
5. कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 4(1) और 8(5)।
6. भारतीय रेल अधिनियम, 1890 की धारा 82क।
7. पिछला पैरा 5.2।
8. एच. एल. डिबेट्स, खंड 216, स्तम्भ 1079–1080 देखिए।

प्रतीत होता है कि इस सुझाव को कार्यान्वित नहीं किया गया[1] भारतीय परिस्थितियों में प्रतिकर के लिए हकदार व्यक्तियों के प्रवर्ग में विधवा पुत्रवधु को सम्मिलित कर लेना विशिष्ट रूप से वांछनीय है। मृतक के भाई की विधवा के बारे में भी यही तर्क लागू होता है। इसलिए इन दो नातेदारों को भी सम्मिलित करने के लिए सूची का विस्तार करना चाहिए।

5.5. उपर्युक्त विचार-विमर्श के आधार पर निम्नलिखित नातेदारों को धारा 1क–दूसरा पैरा–के प्रयोजनों के लिए सम्मिलित करना चाहिए[1] :—

(क) पत्नी या पति।[2]

(ख) सन्तान,[3] जिसके अन्तर्गत सौतेली सन्तान,[4] दत्तक सन्तान और अधर्मज सन्तान[5] तथा पौत्र-पौत्री (ग्रान्ड-चाइल्ड) या इसी प्रकार के व्यक्ति भी हैं।[6]

(ग) जनक, जिनके अन्तर्गत सौतेले जनक और पितामह या मातामही (ग्रैन्ड पैरन्ट) भी हैं।

(घ) भाई[7] जिसके अन्तर्गत अर्ध रक्त या एकोदर रक्त के भाई और उसकी सन्तान भी हैं।

(ङ) बहन[7] जिसके अन्तर्गत अर्ध रक्त या एकोदर रक्त की बहन और उसकी सन्तान भी है।

(च) आन्ट और आन्किल और उनकी सन्तान[7]।

(छ) विधवा पुत्रवधू[8]

(ज) भाई की विधवा[8]

गर्भ में नातेदार—प्रस्ताव ।

5.6. मृत्यु के समय गर्भ में व्यक्तियों को भी, यदि वे बाद में जीवित दशा में जन्म लेते हैं तो, सम्मिलित करना समुचित है।[9]

विच्छिन्न विवाह पति या पत्नी—प्रस्ताव ।

5.7 इस प्रश्न की चर्चा करते समय कि किन व्यक्तियों को हिताधिकारियों की श्रेणी में रखने के लिए हकदार होना चाहिए विच्छिन्न-विवाह पति या पत्नी के बारे में भी विचार प्रकट करना उचित है। इंगलैंड के फैटल एक्सीडेन्ट्स विधान में "पत्नी" शब्द जिस रूप में आता है उस रूप में उसका न्यायिक अर्थान्वयन इस प्रकार किया गया है कि इसके अन्तर्गत विच्छिन्न विवाह पत्नी (डाइवोर्स्ड वाइफ) नहीं है।[10] किन्तु 1962 में इस विधि का संशोधन किया गया। फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1976 की धारा 1 (3) (क) और 1 (4) में (जिस रूप में इनका संशोधन एडमिनिस्ट्रेशन आफ जस्टिस ऐक्ट, 1982 की धारा 3 द्वारा किया गया है उस रूप में) यह उपबन्ध है कि "आश्रित" शब्द का अर्थ अन्य बातों के साथ-साथ मृतक की पत्नी या पति या भूतपूर्व (फार्मर) पत्नी या पति भी है। वह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि मृतक की "भूतपूर्व पत्नी या पति" के अन्तर्गत वह व्यक्ति भी है जिसका मृतक के साथ विवाह बातिल (रद्द) कर दिया गया है या शून्य घोषित कर दिया गया है और इसके अन्तर्गत ऐसा व्यक्ति भी है जिसका विवाह विघटित कर दिया गया है।

1. परिशिष्ट 1, खंड 4(1) और 4(3) देखिए।
2. विवाह विच्छिन्न पति-पत्नी के बारे में आगे पैरा 5.1 देखिए।
3. आगे पैरा 10.6 और परिशिष्ट 1, खण्ड 2(1) और 2(2) देखिए।
4. आगे पैरा 10.1 और परिशिष्ट 1, खण्ड 2(1) देखिए।
5. परिशिष्ट 1, खण्ड 2 (2) और आगे पैरा 10.4 (1) देखिए
6. आगे पैरा 4(ii) देखिए।
7. पिछला पैरा 5.4(क) देखिए।
8. पिछला पैरा 5.4 (ख)।
9. परिशिष्ट 1, खण्ड 2(5) देखिए। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 99(ix) से तुलना कीजिए।
10. पैन कालिन्स बनाम टैलर वुड्रो कन्स्ट्रक्शन कम्प. लि. (1975), 1 आल. इ. आर. 899

गुणागुण के आधार पर यह एक अच्छा उपबन्ध है। न्यायालय विवाह-विच्छेद या विवाह-अकृतता की डिक्री पारित करते समय साधारणतया यह आदेश देता है कि पति या पत्नी अपनी पत्नी या पति को भरण-पोषण के रूप में नियतकालिक संदाय (भुगतान) करे। यदि उस पति या पत्नी की, जिसे भरण-पोषण का संदाय करने के लिए आदेश दिया है, मृत्यु हो जाती है तो यह दायित्व मृतक की सम्पदा पर बना रहना चाहिए। किन्तु भारत में अब इसे न्यायिक रूप से प्राप्त कर लिया गया है। इसलिए इसके लिए किसी कानूनी उपबन्ध की आवश्यकता नहीं है।[1]

निष्पादक, प्रशासक या प्रतिनिधि के नाम में वाद।

5.8. इससे विद्यमान अधिनियम की धारा 1क के दूसरे पैरा के दूसरे भाग से सम्बन्धित बात की चर्चा पूरी हो जाती है। उक्त पैरा में आगे यह भी उपबन्धित है कि मृत व्यक्ति के निष्पादक, प्रशासक या प्रतिनिधि के द्वारा और नाम में वाद लाया जाएगा। इस प्रसंग में "प्रतिनिधि" शब्द का अर्थ पत्नी, पति या जनक या सन्तान है[2] अर्थात् अधिनियम के फायदों के लिए वर्तमान समय पर हकदार व्यक्ति यह भली-भांति समझा जाता है कि प्रतिनिधि द्वारा किया गया दावा वास्तव में सभी आश्रितों की ओर से किया गया दावा है।[3]

यह बात भी है कि आश्रितों में से किसी एक आश्रित ने भले ही दावा न किया हो फिर भी वह प्रतिकर के लिए दूसरों को उनके अधिकार से वंचित नहीं करता।[4] ऐसा वाद सब के फायदे के लिए होता है। किसी एक वर्ग को राहत नहीं दी जाती है बल्कि व्यक्तियों को राहत दी जाती है।[5]

हिताधिकारियों द्वारा वाद-प्रस्ताव।

5.9. यह नोट करने की बात है कि इंगलिश ऐक्ट[6] हिताधिकारियों द्वारा वाद लाने की इजाजत स्पष्ट रूप से उस दशा में देता है जब कि निष्पादक या प्रशासक विनिर्दिष्ट उपबन्ध के अन्तर्गत कार्यवाही नहीं करता है। भारतीय अधिनियम में भी इसी प्रकार का उपबन्ध होना चाहिए। इसकी उपयोगिता स्पष्ट है।[7]

न्यायालय में संदाय-प्रस्ताव।

5.10. शीघ्र निपटारा किए जाने के हित में एक दूसरे मुद्दे पर विचार किया जाना अपेक्षित है। यदि प्रतिवादी को न्यायालय में धन का संदाय करने की सलाह दी जाती है तो इतना ही पर्याप्त होना चाहिए कि वह प्रतिकर की उतनी रकम एक ही बार में संदत्त कर दे जितनी कि नातेदारों के अंशों को विनिर्दिष्ट किए बिना **सभी व्यक्तियों** को संदेय प्रतिकर को पूरा करने के लिए आशयित है। हमारे अधिनियम में ऐसा उपबन्ध अन्तःस्थापित किया जाना चाहिए जिससे कि न्यायालय में संदाय करने वाले प्रतिवादी को ऐसे विचारण के पश्चात्वर्ती प्रक्रमों की परेशानी न उठानी पड़े जो प्रतिकर के केवल प्रभाजन के सम्बन्ध में हों— यह ऐसी बात है कि प्रतिवादी को इसमें कोई रुचि नहीं होगी।[8]

1. **अरुणा बनाम डोरोथैस** ए. आई. आर. 1983 सुप्रीम कोर्ट, 916।
2. **जीत कुमारी बनाम चिटगांव बी एण्ड ई. सप्लाई कं.**, ए. आई. आर. 1947, कलकत्ता 195, 199, पैरा 17 (पुनरीक्षण मामले)।
3. **एन. आई. टी. इन्श्योरेन्स बनाम अनुवरता** ए. आई. आर. 1966 पंजाब, 288, 292 (एफ. बी.)।
4. (1970) 82 पंजाब एल. आर. 42, 45, वार्षिक डाइजेस्ट में नोट किया गया।
5. **कानकार्ड आफ इंडिया इन्श्योरेंस कं. बनाम सुब्रमनियम एय्यर** ए. आई. आर. 1963 केरल 209, 210 पैरा 4।
6. फैटल एक्सीडैन्ट्स ऐक्ट (1976) (इंगलिश) की धारा 2(2)।
7. परिशिष्ट 1, खण्ड 4(2) देखिए।
8. परिशिष्ट 1, खण्ड 9 देखिए।

अध्याय 6

नुकसानी . धारा 1क—तीसरा पैरा

धारा 1क, तीसरा पैरा।

6.1. अब हम नुकसानी के प्रश्न पर विचार करेंगे। 1855 के अधिनियम की धारा 1क का तीसरा पैरा निम्नलिखित रूप में है :—

> "और ऐसी प्रत्येक कार्यवाही में न्यायालय ऐसी नुकसानी दिला सकेगा जैसी वह क्रमशः उन पक्षकारों को, जिनके लिए और जिनके फायदे के लिए ऐसी कार्यवाही लाई गई हो, ऐसी मृत्यु से हुई हानि को आनुपातिक समझे और ऐसे वसूल की गई रकम, सब खर्चों और व्ययों को, जिनके अन्तर्गत प्रतिवादी से वसूल न हुए खर्चे भी हैं, काटने के पश्चात् पूर्व वर्णित पक्षकारों या उनमें से किन्हीं में से ऐसे अंशों में विभाजित की जाएगी जैसे न्यायालय अपने निर्णय या डिक्री द्वारा निर्दिष्ट करे"।

हानि की आनुपातिक नुकसानी।

6.2. यह ध्यान देने की बात है कि धारा 1क के तीसरे पैरे[1] के अधीन नुकसानी "क्रमशः उन पक्षकारों को मृत्यु से हुई हानि" की आनुपातिक होनी है जिनके लिए और जिनके फायदे के लिए कार्यवाही लायी जाएगी। न तो उपर्युक्त उपबन्ध में (और न इंगलिश ऐक्ट के तत्समान उपबन्ध में) उस "हानि" की प्रकृति का वर्णन किया गया है जिसके लिए प्रतिकर दिया जाना है। इसलिए यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि— उस हानि की प्रकृति क्या है जिसके लिए प्रतिकर दिया जाना है ? इस प्रश्न का उत्तर उस दृष्टिकोण पर निर्भर करता है जो कोई व्यक्ति इस गंभीर प्रश्न के बारे में अपनाता है, अर्थात् यह प्रश्न कि आश्रितों के हितों के बारे में **विधि की क्या धारणा होनी चाहिए** ?

विधि में यह अभिकथन करने के पश्चात् कि किसी व्यक्ति के जीवन में हितबद्ध उत्तरजीवी व्यक्तियों को उस क्षति के लिए प्रतिकर मिलना चाहिए जो क्षति उनको उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करने वाले दोषपूर्ण कार्य से हुई है, विधि को इस प्रश्न का भी उत्तर अवश्य देना चाहिए कि (आश्रितों के) किन हितों के बारे में प्रतिकर दिलाए जाने का उपबन्ध किया जाना चाहिए ?

मूर्त और अमूर्त हित।

6.3. जिस व्यक्ति की मृत्यु होती है उस व्यक्ति के जीवित रहने में उत्तरजीवी व्यक्ति का हित **भौतिक या अमूर्त** या दोनों हो सकते हैं। भौतिक हित में ये बातें हैं (i) धन सम्बन्धी फायदा का या ऐसे भौतिक लाभों का, जिनका मूल्य धन के रूप में हो, वर्तमान उपभोग जो मरने वाले व्यक्ति की मृत्यु से समाप्त हो जाता है या (ii) ऐसे फायदों या लाभों का उपभोग करने की उचित प्रत्याशा।

मरने वाले व्यक्ति के जीवित रहने में अमूर्त हित यह है कि किसी विशिष्ट व्यक्ति से उसकी नातेदारी या निकट संसर्ग के नैसर्गिक सम्बन्ध और उससे उत्पन्न होने वाला नैतिक सुख और साहचर्य।[2] यदि प्रभावित हित के सन्दर्भ में प्रतिकर का माप किया जाना है और हित के नष्ट होने से धन के रूप में यह उचित तथा न्याय संगत प्रतिकर होना है तो इसमें अमूर्त हित के लिए और मूर्त हित के लिए भी प्रतिकर होना चाहिए। इसके अन्तर्गत तोषण भी होना चाहिए।[2]

हानि के लिए नुकसानी के बारे में प्रस्ताव।

6.4. इन पहलुओं पर विचार करने के पश्चात् हम यह सिफारिश करते हैं कि धारा 1क के तीसरे पैरे को इतना व्यापक बना देना चाहिए जिससे कि इसमें ऊपर बताई गई प्रकृति की हानि के लिए नुकसानी को भी सम्मिलित किया जा सके।[3-4]

1. पिछला पैरा 6.1
2. औवैन डिक्सन "सरवाइवल आफ काजेज आफ ऐक्शन" (1949)। 1, यूनिव्ह क्वीन्सलैंड एल. जे. 1. दि जैस्टिंग पिलैंट में उद्धृत, 238, 243.
3. पिछला पैरा 6.3
4. परिशिष्ट 1, खंड 6(4)

इसी सिलसिले में यह भी उल्लेख कर देना चाहिए कि इंगलैंड में हाल में ही फैटल एक्सीडेंट्स ऐक्ट, 1976 में किए गए संशोधन द्वारा यह उपबन्ध किया गया है कि मृतक की पत्नी या पति को विशेष रूप से शोकावस्था के लिए प्रतिकर के लिए दावा करने की इजाजत दी जाए किन्तु यह अधिकतम सीमा तक ही हो।[1] कामन ला शोकावस्था के लिए नुकसानी दिलाने की इजाजत नहीं देता था।[2]

धारा 1क, तीसरा पैरा।

6.5. इस प्रक्रम पर धारा 1क के तीसरे पैरे[3] से सम्बन्धित एक दूसरे मुद्दे का उल्लेख किया जा सकता है। हमारे विचार से इस आशय का एक विनिर्दिष्ट उपबन्ध आवश्यक है कि क्षति के अनुपात के अनुसार नुकसानी दिलाई जानी चाहिए इसलिए वर्तमान उपबन्ध को कायम रखा जा सकता है। किन्तु हम यह सिफारिश करते हैं कि इस पैरा में कुछ ऐसे शाब्दिक सुधार और परिवर्धन किए जाने चाहिए जो इस रिपोर्ट के अन्त में संलग्न प्रारूप में स्पष्ट किए गए हैं।[4]

अन्त्येष्टि व्ययों का सम्मिलित किया जाना।

6.6. अन्त्येष्टि व्ययों के बारे में भी स्पष्ट उपबन्ध किया जाना आवश्यक है।[5]

केरल के एक मामले में[6] इस विषय के बारे में निम्नलिखित मत प्रकट किया गया है:—

प्रतिकर सम्बन्धी नुकसानी का एक दूसरा ऐसा मद है जो धारा 1क के विस्तार के अन्तर्गत आ सकता है और वह मद वह व्यय है जो नातेदारों ने मृतक की चिकित्सा और अन्त्येष्टि के लिए किया हो।

"(7) धारा 2 के अधीन वसूलनीय नुकसानी की मदें निम्नलिखित हैं:—

(i) मृतक द्वारा सहन किया गया दर्द और कष्ट ;

(ii) भविष्य में जीवित रहने की प्रत्याशा की हानि ;

(iii) मृत्यु की तारीख तक उपार्जन और लाभों की हानि (किन्तु भविष्य में होने वाला उपार्जन नहीं) ;

(iv) चिकित्सीय व्यय और अस्पताल में किए गए व्यय, यदि व्यय किया गया हो तो;

(v) अन्त्येष्टि व्यय, जब ऐसे व्ययों का संदाय (भुगतान) मृतक की सम्पदा में से किया गया है।"

हमारे विचार में अन्त्येष्टि व्ययों के लिए स्पष्ट उपबन्ध करना वांछनीय होगा।

प्रभाजन-सिफारिश।

6.7. हम यह सिफारिश करते हैं कि दिलवाए गए प्रतिकर का निम्नलिखित तरीके से प्रभाजन किए जाने के बारे में उपबन्ध को भी सम्मिलित करना उपयोगी होगा :—

(1) **जहां कि प्रतिकर का अन्यथा प्रभाजन नहीं किया गया है वहां न्यायालय उसे हकदार व्यक्तियों के बीच प्रभाजित कर सकता है।**

(2) **न्यायालय ऐसे धन का जिसके लिए अठ्यरक (माइनर) हकदार हैं, वितरण अपने विवेकानुसार मुलतवी कर सकता है और अविभाजित निधि में से संदाय करने का निदेश दे सकता है।**[7]

---

1. 1982 में यथासंशोधित फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1976 की धारा 1क।
2. सालमण्ड एंड ह्यूस्टन, टार्टस (1981), पृष्ठ 548 और उसमें उद्धृत मामले।
3. पिछला पैरा 6.1
4. परिशिष्ट 1, खण्ड 6(1)
5. परिशिष्ट 1, खंड 6(3)
6. **कानकार्ड आफ इंडिया ब. सुब्रमनियम एय्यर** ए. आर. आर. 1964 केरल 209, 221 **पैरा 7** (न्यायमूर्ति मैनन और माधवन नायर) न्या. माधवन नायर द्वारा निर्णय।
7. परिशिष्ट 1, खंड 10.

अध्याय 7

विधवा का पुनर्विवाह

विचारणीय प्रश्न।

7.1. प्रतिकर के लिए हकदार व्यक्तियों और वसूल करने के लिए उनके अधिकार के सम्भाव्य वर्जन के सम्बन्ध में एक ऐसा प्रश्न है जिस पर विचार किया जाना आवश्यक है और वह प्रश्न उस विधवा की, जो पुनर्विवाह कर लेती है, स्थिति के सम्बन्ध में है। इस प्रसंग में जो यथोचित प्रश्न उत्पन्न हुए हैं व निम्नलिखित हैं:—

(i) जिस विधवा ने पुनर्विवाह कर लिया है, क्या वह प्रतिकर के लिए हकदार है ?

(ii) जिस विधवा ने अभी तक पुनर्विवाह नहीं किया है किन्तु जिसक बारे में यह संभावना है कि वह भविष्य में पुनर्विवाह कर लेगी, क्या वह प्रतिकर के लिए हकदार है ?

ऊपर बताई गई दोनों परिस्थितियों में से प्रत्येक परिस्थिति के बारे में अलग-अलग चर्चा करना सुगम होगा।

वह स्थिति जब विधवा ने पुनर्विवाह कर लिया है।

7.2 जहां कि विधवा ने प्रतिकर के दावे की अर्जी का अवधारण हो जाने के समय से पहले ही पुनर्विवाह कर लिया है वहां उस का मृतक की सम्पदा पर आश्रित रहना सभी व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए समाप्त हो गया कहा जाएगा। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इस तर्क के आधार पर यह अभिनिर्धारित किया है कि जिस विधवा ने पुनर्विवाह कर लिया है वह प्रतिकर के लिए हकदार नहीं है।[1]

विधवा के पुनर्विवाह की संभावना।

7.3. किन्तु जहां कि विधवा ने अभी तक पुनर्विवाह नहीं किया है और उसके पुनर्विवाह करने की संभावना के प्रभाव के प्रश्न पर विचार किया जाना है वहां इस प्रश्न का हल आसान नहीं है। किसी भी न्यायालय के लिए यह सन्तोषप्रद रूप से निर्धारित करना कठिन है कि क्या विधवा के पुनर्विवाह की "संभावना" है और यदि ऐसी संभावना है तो कब और किसके साथ पुनर्विवाह होगा। कर्नाटक के एक मामले में इस नाजुक मसले का उदाहरण मिलता है जिसमें न्यायालय को एक विधवा के पुनर्विवाह की सम्भावना निर्धारित करने के प्रश्न को हल करना पड़ा था।[2] उक्त मामले में दावेदार एक मुसलमान विधवा थी। मोटर यान अधिनियम के अधीन गठित दावा अधिकरण के समक्ष जब उसकी प्रतिपरीक्षा की गई तब उसकी आयु 21 वर्ष की थी और उसने इस बात से साफ इन्कार किया कि पुनर्विवाह करने का उसका कोई इरादा है। उसके इन्कार के बावजूद दावा अधिकरण ने उसके पुनर्विवाह की सम्भावनाओं के बारे में यह विचार करने के पश्चात् (जो उसकी राय में) "वास्तविक और आसन्न थे उसे जो प्रतिकर दिलवाया उसे केवल पांच वर्ष तक के क्रय मूल्य के आधार पर सीमित कर दिया। अपील में उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसा दृष्टिकोण अपनाना गलत था। उच्च न्यायालय ने यह कथन किया कि मुसलमान दावेदारों के मामलों में यह सच है कि उनकी स्वीय विधि (पर्सनल ला) विवाह को सिविल संविदा मानती है और विधवा के पुनर्विवाह से उसका सामाजिक बहिष्कार नहीं होता है। फिर भी, उच्च न्यायालय के अनुसार ऐसे पुनर्विवाह की सम्भावनाओं की वास्तविकता के बारे में पुनः आश्वस्त होने का उच्चत्तर मापदण्ड और आश्रित विधवा को इसके परिणामस्वरुप मिलने वाले आर्थिक फायदों को उसके पुनर्विवाह की संभावनाओं पर विचार किए जाने से पहले प्रतिकर की रकम नियत करनें में ध्यान में रखना आवश्यक है। उच्च न्यायालय के अनुसार इस मामले में इस बात पर ध्यान नहीं दिया गया है।

दिल्ली के एक मामले में आलोचना।

7.4. दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष भी यह मुद्दा उठा था। दिल्ली उच्च न्यायालय ने पुनर्विवाह की संभावनाओं के प्रश्न का अवधारण करने की कठिनाई की आलोचना करते हुए 1976 में रिपोर्ट किए गए एक निर्णय में निम्नलिखित मत प्रकट किया था :—

"जब तक कोई विधायी सुधार नहीं किया जाता है तब तक दावेदार विधवा के पुनर्विवाह की सम्भावना भारत में ध्यान दिए जाने का केन्द्रबिन्दु बना रहेगा। न्यायाधीश यह

---

1. **ओरियन्टल फायर एण्ड जनरल इन्श्योरेन्स कं. लि. बनाम चन्द्रावती** ए. आई. आर. 1983 इला. 174, 178 पैरा 10 और 11
2. **रजाबी बनाम ओरियन्टल फायर एंड जनरल इन्श्योरेस कं. लि. क्वायम्बटूर,** ए. आई. आर. 1981 कर्नाटक 70

अनुमान लगाते रहेंगे कि दावेदार द्वारा नया पति खोजने की और आश्रय समाप्त कराने की कितनी सम्भावना है ।[1]

इंगलिश विधि ।

7.5. इस प्रसंग में यह नोट करना उपयोगी होगा कि इंगलैंड में विधवा के पति की मृत्यु पर उसे संदेय प्रतिकर का परिमाण निर्धारित करने में उस विधवा के पुनर्विवाह की सम्भावनाओं पर विचार किया जाना पहले एक सुसंगत बात समझी जाती थी। हाउस आफ लार्ड्स के समक्ष एक दिलचस्प मामले में यह प्रश्न उठा था कि क्या विधवा पुनर्विवाह कर लेने पर नुकसानी का दावा करने का अधिकार खो देती है ? इस मामले के निर्णय में विधवा को प्रदान की जाने वाली नुकसानी के निर्धारण में पुनर्विवाह की सम्भावनाओं पर विचार किए जाने के विरुद्ध कुछ जोरदार तर्क दिए गए थे।[2] लार्ड डिपलाक ने यह बताया कि नुकसानी दिलवाई जाने वाली रकम का प्रभाव विवाह की सम्भावनाओं पर स्वतः पड़ सकता है क्योंकि खोए हुए आश्रय के लिए नुकसानी जितनी ही अधिक होगी उतनी ही अच्छी सम्भावनाएं विधवा के लिए दूसरा पति प्राप्त करने में होगी।

जैसा कि एक विद्वान लेखक[3] ने बताया है कि हाऊस आफ लार्डस के लिए यह विचार करना आवश्यक नहीं था कि खोए हुए आश्रय के लिए नुकसानी का परिमाण उस दशा में कितना होगा जब कि पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा ने पुनर्विवाह नुकसानी के अन्तिम रूप से दिलवाए जाने से पहले पुनर्विवाह कर लिया था। किन्तु विद्वान लेखक ने निम्नलिखित बात भी बतायी है :—

> "किन्तु यह रुचिकर बात है कि लार्ड डिपलाक ने अपने भाषण में दो बार यह बात बतायी है कि आश्रय की रकम का अनुमान "उसकी (पति की) मृत्यु की तारीख पर" करना चाहिए। यदि विधवा अपने पति की मृत्यु के पश्चात् विवाह करती है तो क्या वह प्रतिकर, जो उसकी मृत्यु होने पर संदेय हुआ है, इस कारण घटा दिया जाना चाहिए कि विधवा के पुनर्विवाह जैसी पश्चात्-वर्ती घटना हुई है ? संदाय की जाने वाली उस रकम की संगणना करने में, जिसे पाने के लिए विधवा हकदार है, इस बात पर निःसंदेह विचार किया जाएगा कि भविष्य में उस विधवा के कितने समय तक जीवित रहने की प्रत्याशा है किन्तु उसके पुनर्विवाह को उसमें निहित होने वाले उसके अधिकार के पश्चात् उत्पन्न होने वाला एक स्वतंत्र कार्य माना जा सकता है। यदि इस बात का साक्ष्य है कि उसने विवाह की पेशकश को इन्कार किया है तो क्या इस इन्कार का प्रयोग आश्रयता के लिए उसके दावे को इस आधार पर घटाने के लिए किया जा सकता है कि उसका यह कर्त्तव्य था कि वह अपनी हानि को सीमित करने के लिए उचित कदम उठाए ? और यदि जिस विधवा ने विधि-रिपोर्टों को पढ़ा है वह यह अनुभव करती है कि आश्रयता के लिए संदाय प्राप्त करने से पहले उसके लिए विवाह करने की अपेक्षा पाप का जीवन व्यतीत करना आर्थिक दृष्टि से बेहतर है तो क्या विधि को उसे ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए ? यदि आश्रयता के लिए संदाय उसके पुनर्विवाह कर लेने तक वार्षिक रूप में संदाय था तो इस प्रश्न का उत्तर आसान है किन्तु यदि यह संदाय एकमुश्त ऐसी रकम के रूप में है जो उसके पति की मृत्यु के पश्चात् संदेय होती है तो वह उसे उस पूरी रकम के लिए हकदार होना चाहिए, भले ही उसके पश्चात् वह उस रकम का उसे संदाय किए जाने से पहले पुनर्विवाह करने के लिए स्वतंत्र कदम उठाती है।
>
> "इसमें एक अन्तिम बात, जो रुचिकर हो सकती है वह यह है कि यदि विधवा के पति की मृत्यु और उसकी आश्रयता के बारे में विचारण में रकम की संगणना करने के समय के बीच उस विधवा का चेहरा किसी गम्भीर दुर्घटना से खराब हो जाता है तो क्या नुकसानी को इस कारण पर्याप्त रूप में बढ़ा दिया जाएगा कि उसके पुनर्विवाह की संभावनाएं इस बीच की अवधि के दौरान कम हो गई है ?"

1. **जयमल सिंह बनाम ज्वाला देवी** ए. आई. आर, 1976 दिल्ली 127, 131
2. **मैलेट बनाम मैकमोनागल** (1969) 2 डब्लू. एल. आर. 767
3. आर. वी. बेकर, नोट (1969) 85 एल. क्यू. आर. 305, 306

इंगलैंड में सुधार ।

7.6. इंगलैंड में इस समस्या को विधान मण्डल के हस्तक्षेप द्वारा हल किया गया था। विधान मण्डल ने ला रिफार्म (मिसलिनियस प्राविजन्स) ऐक्ट, 1971 अधिनियमित किया। ऐक्ट की धारा 4(1) में[1] यह उपबन्धित है कि "विधवा को संदेय नुकसानी का निर्धारण करने में .....विधवा के पुनर्विवाह को या उसके पुनर्विवाह की सम्भावनाओं को हिसाब में नहीं लिया जाएगा।"

इंगलैंड में वर्तमान उपबन्ध।

7.7. इस उपबन्ध को फैटल एक्सीडेंट्स ऐक्ट, 1976 में पुनः अधिनियमित किया गया है। इंगलैंड में इस विषय के सम्बन्ध में वर्तमान उपबन्ध फैटल एक्सीडेन्टस ऐक्ट में निम्नलिखित रूप में हैं[2] :—

> "(3) इस ऐक्ट के अधीन कार्यवाही में एक विधवा को उसके पति की मृत्यु के बारे में संदेय नुकसानी में कमी होने का निर्धारण किया जाना है तब उस विधवा के पुनर्विवाह को या पुनर्विवाह की सम्भावनाओं को हिसाब में नहीं लिया जाएगा।"

इस उपबन्ध ने इस विषय को तय कर दिया है। किन्तु यह कहना सम्भव है कि इंगलिश उपबन्ध विधवा के वास्तविक पुनर्विवाह की अवहेलना करने में बहुत आगे बढ़ गया है।[3]

जैसा कि ऊपर कहा गया है यह उपबन्ध इंगलैंड में पहली बार 1971 में इस कारण अन्तः स्थापित किया गया था[4] कि कतिपय न्यायिक विनिश्चयों[5] में यह बताया गया था कि न्यायालय के लिए यह जांच करना बहुत कठिन होगा कि किसी विधवा के पुनर्विवाह की "सम्भावनाएं" कहां तक हैं।

हाउस आफ लार्ड्स में विचार-विमर्श (डिबेट)।

7.8. इस बात का उल्लेख कर देना चाहिए कि जब हाउस आफ लार्ड्स में ला रिफार्म (मिसलिनियस प्राविजन्स) बिल पर (उसके यथा पुरःस्थापित रूप पर) विचार-विमर्श किया जा रहा था उस समय पुनर्विवाह की सम्भावनाओं को प्रतिकर के निर्धारण के लिए सुसंगत माने जाने के विरुद्ध बहुत जोरदार विचार प्रकट किए गए थे। यह विधेयक (बिल) जिस रूप में उस समय था उस रूप में सम्भवतः इसमें न्यायालय को इस बात की इजाजत दी गई थी वह विधवा को प्रतिकर दिलवाने में उसके वास्तविक विवाह को हिसाब में ले। बैरनैस (बैरन की उपाधि प्राप्त महिला) सम्मरस्किल ने सबसे जोरदार विरोध किया था और उसके भाषण में से एक अंश उद्धृत करना रुचिकर हो सकता है[6] :—

> "अन्त में मैं यह कह रही हूँ कि यह अफसोस की बात है कि नोबुल लार्ड्स इस बात की ओर ध्यान दिए बिना कि एक महिला को कितना मानसिक कष्ट उठाना पड़ता है इस संशोधन द्वारा हमारे न्यायालयों में महिला के मूल्य का असभ्य रूप से निर्धारण करने की पद्धति हमेशा के लिए थोपना चाहते हैं। मैं फिर इस बात पर जोर देना चाहती हूँ कि विधवा को अपने पति की काम-काजी भागदारनी (वर्किंग पार्टनर) मानना चाहिए जिसके लिए वह घर पर काम करती थी, बच्चों का पालन पोषण करती है और इस प्रकार अपने पति को उसकी मजदूरी या वेतन उपार्जित करने के लिए और उसका कौशल सुधारने के लिए समर्थ बनाती थी। जैसा कि मैंने विधेयक के द्वितीय वाचन के समय कहा था कि यह विधवा के जीवन की केवल एक ऐसी अवस्था या स्थिति है जिसका अन्त दुखदायी था। उसे जो आर्थिक प्रतिकर मिलेगा उसका उसके जीवन की दूसरी अवस्था या स्थिति से कोई सम्बन्ध नहीं है चाहे वह विवाह करे या अकेली रहे।"

इंगलिश ऐक्ट की समालोचना।

7.9. यह स्पष्ट है कि भारत में इस विधि का सुधार आवश्यक है। किन्तु इसके साथ यह भी बता देना चाहिए कि ऐसा प्रतीत होता है कि इंगलिश ऐक्ट[2] ने पुनर्विवाह की सम्भावनाओं को ही विचार किए जाने से अलग नहीं किया बल्कि वह विधवा के वास्तविक पुनर्विवाह को भी विचार योग्य नहीं मानकर

1. ला रिफार्म (मिसलिनियस प्राविजन्स) ऐक्ट, 1971 (इंगलैंड) की धारा 4(1)। अब 1982 में यथा संशोधित फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1976 की धारा 3(3) देखिए।
2. 1982 में यथासंशोधित फैटल एक्सीडैन्टस ऐक्ट की धारा 3(3)
3. आगे पैरा 7.9 और 7.11 देखिए।
4. ला रिफार्म (मिसलिनियस प्राविजन्स) ऐक्ट, 1971 की धारा 4(1) जिसके स्थान पर 1976 के ऐक्ट की धारा 3(2) रखी गई और फिर 1982 में उसे प्रतिस्थापित किया गया।
5. **बक्ले बनाम एलान** (1967) आल. ई. आर. 539
6. हाउस आफ लार्ड्स डिबेट (1971) खण्ड 318 स्तम्भ 539–540 (6 मई, 1971) में बैरनैस सम्मरस्कलिक का भाषण।

बहुत आगे बढ़ गया है।[1] न्यायालय को ऐसे पुनर्विवाह की जांच करने से प्रतिषिद्ध करना वास्तविकताओं की अवहेलना करना है। जिस रूप में यह उपबन्ध अधिनियमित किया गया है उसका इंगलैंड में भी प्रत्येक व्यक्ति ने वास्तव में स्वागत नहीं किया है। इस उपबन्ध की आलोचना इंगलैंड के विधि आयोग इंगलिश (ला कमीशन)[2] ने और वैयक्तिक क्षति से सम्बन्धित पीयरसन कमीशन[3] ने भी की है।

सालमण्ड के विचार।

7.10. अपकृत्य (टार्ट) के विषय पर सालमण्ड की पुस्तक के अद्यतन संस्करण के सम्पादकों ने अपने विचारों को निम्नलिखित रूप में अभिलिखित किया है :–[4]

> "यह विधान दर्शित करता है कि ऐसा परिवर्तन करना सुधार करने के बराबर नहीं है। इससे घोर अन्याय हुआ है। कम से कम इतना तो हुआ ही कि न्यायालय एक ऐसे महत्वपूर्ण तथ्य को जो घटित हुआ है, अर्थात विधवा का एक दूसरे धनी पति से पुनर्विवाह की अवहेलना करने के लिए विवश हो सकता है[5]।

पुनर्विवाह करने वाली विधवा के बारे में विधि आयोग के विचार।

7.11. हमारी राय में पुनर्विवाह के सम्बन्ध में इंगलिश उपबन्ध (जिसे हमने ऊपर उद्धृत किया है)[1] आंशिक रूप में अच्छा है और आंशिक रूप में खराब है। जहां तक कि यह न्यायालय से यह अपेक्षा करता है कि वह विवाह की सम्भावनाओं की अवहेलना करे वहां तक यह इस कारण अच्छा है कि यह न्यायालय को लक्ष्यहीन जांच करने के काम से बचा देता है। किन्तु जहां तक यह न्यायालय से यह अपेक्षा करता है कि वह विधवा के वास्तविक पुनर्विवाह की भी अवहेलना करे वहां तक यह ठीक प्रतीत नहीं होता। पुनर्विवाह के पश्चात् (यह उपधारणा कर लेने पर कि दावों का विचारण समाप्त होने से पहले पुनर्विवाह हो जाता है), न्यायालय यह जानता है कि विधवा किसी दूसरे स्रोत से सहारा प्राप्त करेगी। न्यायालय को इस वास्तविकता की अवहेलना नहीं करनी चाहिए।

विधवा के पुनर्विवाह के बारे में सिफारिश।

7.12. ऊपर विचार-विमर्श की दृष्टि से हमारी सिफारिश यह है कि न्यायालय को विधवा के पुनर्विवाह की सम्भावनाओं का निर्धारण नहीं करना चाहिए, किन्तु इसके साथ ही न्यायालय को विधवा के वास्तविक पुनर्विवाह को प्रतिकर दिए जाने के लिए हिसाब में अवश्य लेना चाहिए[6]।

---

1. आगे पैरा 7.7 देखिए।
2. इंगलैंड का ला कमीशन। वैयक्तिक क्षति के मुकदमों के सम्बन्ध में रिपोर्ट (ला कमीशन सं. 56) (1978) सी एम डी 7054, पैरा 411
3. पीयरसन कमीशन (रायल कमीशन आन सिविल लाइबिलिटीज एण्ड कम्पनसेशन फार पर्सनल इन्जरीज) रिपोर्ट
4. सालमण्ड एण्ड ह्यूस्टन, टार्टस (1981), पैरा 548 (ह्यूस्टन और चैम्बर्स द्वारा सम्पादित)।
5. एतथ्या की पुस्तक "एक्सीडैन्ट्स, कम्पनसेशन और दि ला (तीसरा संस्करण) पृष्ठ 184
6. परिशिष्ट 1, खण्ड 6 (2) देखिए।

वादों का बाहुल्य : धारा 2

8.1. अब हम अधिनियम की धारा 2 पर विचार करेंगे। यह विचित्र बात है कि यह धारा "परन्तु" शब्द से प्रारंभ होती है। वास्तव में इस धारा के दो भाग हैं। पहला भाग निम्नलिखित रूप में है :—

धारा 2—पहला भाग।

"2. **एक से अधिक वादों का न लाया जाना :**

परन्तु सर्वदा यह कि परिवाद की उसी विषय-वस्तु के लिए और उसकी बाबत एक से अधिक कार्यवाही या वाद नहीं लाया जाएगा।"

इस धारा का दूसरा भाग निम्नलिखित रूप में है :—

"परन्तु ऐसी किसी कार्यवाही या वाद में, मृतक का निष्पादक, प्रशासक या प्रतिनिधि, मृतक की सम्पदा को ऐसे दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम के कारण हुई किसी धन-संबंधी हानि के लिए दावा निविष्ट कर सकेगा और उसे वसूल कर सकेगा और वह राशि वसूल होने पर मृतक की सम्पदा की आस्तियों का भाग समझी जाएगी।"

धारा 2, पहला भाग—मामूली शाब्दिक परिवर्तनों के लिए सिफारिश।

8.2. इस धारा का पहला भाग[1] कार्यवाहियों के बाहुल्य को प्रतिषिद्ध करने के लिए है और इसमें कोई मूल परिवर्तन करना अपेक्षित नहीं है। किन्तु कुछ मामूली शाब्दिक परिवर्तन इसकी भाषा को आधुनिक विधिक प्रथा के अनुसार बनाने के लिए आवश्यक हैं। हम इस रिपोर्ट में विधेयक का जो प्रारूप संलग्न कर रहे हैं उससे ये परिवर्तन स्पष्ट हो जाएंगे।[2]

धारा 2, दूसरा भाग—मामूली शाब्दिक परिवर्तन की आवश्यकता।

8.3. धारा 2 के दूसरे भाग[1] में एक अधिक महत्वपूर्ण विषय की चर्चा है। यह मृतक के निष्पादक प्रशासक या प्रतिनिधि को इस बात की अनुमति देता है कि वह दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम से कारित सम्पदा की धन सम्बन्धी हानि के लिए दावा निविष्ट कर सकेगा और उसे वसूल कर सकेगा।

उच्चतम न्यायालय द्वारा विश्लेषण।

8.4. उच्चतम न्यायालय को धारा 1 और धारा 2 की विषय-वस्तुओं की तुलना करने का अवसर मिला था और उसने निम्नलिखित रूप में अपना मत प्रकट किया था[3] :—

> "धारा 1 के अधीन वाद-हेतुक और धारा 2 के अधीन वाद-हेतुक भिन्न-भिन्न हैं। धारा 1 के अधीन नुकसानी उन व्यक्तियों के फायदों के लिए वसूलनीय है जिनका उल्लेख इस धारा में किया गया है, जबकि धारा 2 के अधीन प्रतिकर सम्पदा के फायदे के लिए होता है। धारा 1 के अधीन नुकसानी उस हानि के बारे में संदेय है जिस हानि को इस धारा में उल्लिखित व्यक्ति उठाते हैं, जब कि धारा 2 के अधीन नुकसानी के लिए दावा अन्य बातों के साथ-साथ मृतक के जीवित रहने की प्रत्याशा की हानि के लिए किया जा सकता है। यद्यपि दोनों धाराओं के अधीन प्रतिकर के लिए हकदार पक्षकार कुछ मामलों में वही व्यक्ति हो सकते हैं जो दोनों धाराओं के अधीन हकदार हैं किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि वे वही व्यक्ति हों। धारा 1 के अधीन हकदार व्यक्ति धारा 2 के अधीन दावा करने वाले व्यक्तियों से भिन्न व्यक्ति हो सकते हैं। चूंकि प्रत्यक्षतः दोनों दावे भिन्न भिन्न वाद-हेतुकों पर आधारित होते हैं इसलिए दावेदार, चाहे वे वही व्यक्ति हों या भिन्न-भिन्न व्यक्ति हों, दोनों मदों के अधीन अलग-अलग प्रतिकर वसूल करने के लिए हकदार होंगे। यदि कोई व्यक्ति, जो दोनों धाराओं के अधीन फायदा लेता है, वही व्यक्ति है तो उसे उसी हानि के लिए दो बार प्रतिकर वसूल करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। दोनों मदों के अधीन नुकसानी दिलवाने में उसी एक दावे के लिए दो बार नुकसानी नहीं मिल सकती अर्थात् यदि सम्पदा की हानि के लिए प्रतिकर के किसी भाग की संगणना धारा 1 के अधीन वैयक्तिक हानि के लिए की जाती है तो उस भाग को धारा 2 के अधीन दिए जाने वाले प्रतिकर में से अपवर्जित कर दिया जाएगा (निकाल दिया जाएगा) और इसकी विपरीत स्थिति में विपरीत ढंग से किया जाएगा।"

---

1. पिछला पैरा 8.1
2. परिशिष्ट 1, खंड 5
3. **गोवाल्ड मोटरसर्विस लि.** बनाम **बी. एस. के. वेलूस्वामी**, ए. आई. आर. 1962 सुप्रीम कोर्ट।

निर्णयों जनित विधि (केस ला) में स्थिति।

8.5. यह निश्चित विधि है कि घातक दुर्घटना अधिनियम में धारा 1 के अधीन दायित्व और धारा 2 के अधीन दायित्व अलग-अलग, भिन्न-भिन्न और एक दूसरे से स्वतंत्र हैं।[1] धारा 1 के अधीन नुकसानी उन व्यक्तियों के फायदे के लिए वसूलनीय है जिनका उल्लेख उस धारा में किया गया है और उनके द्वारा उठाई गई हानि के लिए है। इसके विपरीत धारा 2 के अधीन नुकसानी मृतक की सम्पदा की उस धन की हानि की पूर्ति के लिए दिलवाई जाती है जो दुर्घटना के परिणाम स्वरूप उसकी सम्पदा को हुई है।[2] ये दोनों दावे भिन्न-भिन्न वाद-हेतुक पर आधारित हैं और दावेदार दोनों मदों के अधीन अलग-अलग प्रतिकर वसूल करने के लिए हकदार होंगे। किन्तु यदि धारा 1 के अधीन फायदा लेने वाला व्यक्ति वही व्यक्ति है जो धारा 2 के अधीन प्रतिकर के लिए हकदार है तो उसी दावे के लिए दो बार प्रतिकर नहीं दिलाया जा सकता और धारा 2 के अधीन मृतक की सम्पदा की हानि के लिए दिलवाए गए प्रतिकर को धारा 1 के अधीन दावेदारों को संदेय प्रतिकर की संगणना करने के हिसाब में लिया जाएगा।

इस प्रकार से यह दावा आर्थिक हानि के सम्बन्ध में है।[2,3,4]

शाब्दिक परिवर्तन करने की सिफारिश।

8.6. उक्त धारा के इस भाग में किसी सारवान परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। किन्तु कुछ मामूली परिवर्तन आवश्यक हैं। ये परिवर्तन उस विधेयक के पुनः प्रारूप में स्पष्ट हो जाएंगे जिसकी हमने सिफारिश की है और जो इस रिपोर्ट के परिशिष्ट में संलग्न है।[5]

---

1. **रहीम** बनाम **सवरी बाई** ए. आई. आर. 1973 मद्रास 83, 88
2. **के. सी. एस. अय्यर** बनाम **टी. के. नायर** 1970, सुप्रीम कोर्ट, 376, 377, पैरा 4
3. **बाई नन्दा** बनाम **पटेल शिवभाऊ** आई. एल. आर. (1966) गुजरात, 500
4. **इंजीनियर्स इन्टरनेशनल** बनाम **हनुमन्ता राजू** (1974) 1 एम. एल. जे. 37
5. परिशिष्ट 1, खण्ड 8

अध्याय 9

प्रक्रिया : धारा 3

धारा 3—प्रस्तावित संशोधन।

9.1. अब हम प्रक्रिया सम्बन्धी कुछ बातों की चर्चा कर सकते हैं। इस बारे में अधिनियम की धारा 3 सुसंगत है और वह निम्नलिखित रूप में है:—

> **"3. वादी द्वारा विशिष्टियों आदि का दिया जाना:—**
>
> ऐसी किसी कार्यवाही या वाद के वादपत्र में उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों की, जिनके लिए या जिनकी ओर से ऐसी कार्यवाही या वाद लाया जाए और उस दावे की प्रकृति की, जिसकी बाबत नुकसानी वसूल की जानी चाही गई तो, पूरी विशिष्टियां होंगी।"

धारा 3 के संशोधन का प्रस्ताव।

9.2. सिविल प्रक्रिया संहिता में वाद की विषय-वस्तु[1] के बारे में विनिर्दिष्ट उपबन्धों की दृष्टि से इस धारा में दावे की प्रकृति से सम्बन्धित भाग निरर्थक है और इसे निकाल देना चाहिए।

दी जाने वाली विशिष्टियां।

9.3. जब धारा (3) में यह उपबन्धित है कि वाद-पत्र में दावे की प्रकृति की विशिष्टियां अवश्य दी जानी चाहिए तो इस धारा में इस बात की निस्सन्देह परिकल्पना की गई है कि हानि का उचित ब्यौरा अवश्य बताया जाना चाहिए क्योंकि दावा तो हानि के बारे में नुकसानी पाने के लिए है[2]। यदि इस धारा में ऐसा स्पष्ट रूप से उपबन्धित होता तो यह बेहतर होता और हम तदनुसार प्रस्ताव कर रहे हैं।[3] 'इस अवसर पर इस धारा की भाषा में भी सुधार कर देना चाहिए जो वर्तमान रूप में अप्रचलित है।

शपथ-पत्र।

9.4. इस धारा में यह भी उपबन्धित किया जा सकता है कि वादी द्वारा वादपत्र के साथ एक ऐसा शपथ-पत्र फाइल किया जाएगा जिसमें वह यह कथन करेगा कि वादपत्र में बताए गए जिन व्यक्तियों की और से वाद लाया जाता है वे उसके सर्वोत्तम ज्ञान, जानकारी और विश्वास में वही व्यक्ति हैं जो फायदे के लिए हकदार हैं या हकदार होने का दावा करते हैं।[4] यदि उस न्यायालय की, जिसमें वाद संस्थित किया जाता है, यह राय है कि यदि शपथपत्र फाइल किए जाने को छोड़ देने के लिए पर्याप्त कारण हैं तो वह ऐसा कर सकता है।[5]

प्रश्नों का अवधारण।

9.5. यह और भी उपबन्धित किया जा सकता है कि जब मृतक की पत्नी, पति, जनक या सन्तान के रूप में हकदार होने का दावा करने वाले दो या दो से अधिक व्यक्तियों द्वारा या उनके फायदे के लिए वाद लाए जाते हैं तब वह न्यायालय, जिसमें ऐसे वाद या उनमें से कोई वाद लम्बित है, प्रतिवादी के केवल दायित्व के प्रश्न का ही नहीं बल्कि यदि कोई नुकसानी वसूल की जा सकती हो तो उसके लिए, अधिनियम के अधीन हकदार व्यक्तियों के सभी प्रश्नों का भी अवधारण करने के लिए ऐसा आदेश कर सकता है जो वह न्यायसंगत समझे।[6]

दायित्व और दावा के प्रश्नों का अवधारण।

9.6. एक ऐसा उपबन्ध रखा जाना उपयोगी होगा जिसमें दायित्व के प्रश्नों और दावा के प्रश्नों को अवधारित करने की प्रक्रिया बताई गई हो। पहला, अर्थात् दायित्व के प्रश्नों का अवधारण पहले कर देना बेहतर होगा। इस विषय के बारे में एक समुचित उपबन्ध की सिफारिश की जा रही है।[7]

---

1. सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 का आदेश 7 नियम।
2. देखिए (क) **गूल बाई** बनाम **रैसत्नजज** ए. आई. आर. बम्बई, 333, 335।
   (ख) **इस्थर** बनाम **मौरिस** ए. आई. आर. 1934 कलकत्ता, 655, 658।
3. परिशिष्ट 1, खण्ड 11 (1) देखिए।
4. परिशिष्ट 1, खंड 11(2)।
5. परिशिष्ट 1, खण्ड (3)।
6. परिशिष्ट 1, खंड 12।
7. परिशिष्ट 1, खंड 13।

कुछ हिताधिकारियों का असंयोजन।

9.7. विद्यमान अधिनियम में यह उपबन्ध है कि अधिनियम के अधीन दावा सभी आश्रितों की ओर से अवश्य ही किया जाना चाहिए। इस उपबन्ध से यह प्रश्न उठता है कि यदि केवल कुछ ही हिताधिकारियों द्वारा वाद लाया जाता है तो क्या होगा? केरल के मामले में,[1] जैसा कि बताया गया है और जिस मामले के बारे में पहले ही उल्लेख किया गया है[2] यह अभिनिर्धारित किया गया था कि वाद को इस कारण खारिज कर दिया जाना चाहिए कि अन्य हिताधिकारी अभिलेख (रेकार्ड) में नहीं हैं, लेकिन ऐसा दृष्टिकोण अपनाना अत्यन्त तकनीकी दृष्टिकोण होगा। उस विशिष्ट मामले में उस विचारण न्यायालय ने असंयोजन के आधार पर की गई आपत्ति को नामंजूर कर दिया था जिसके दृष्टिकोण को उच्च न्यायालय ने ठीक मानकर कायम रखा। अन्यत्र उत्पन्न होने वाले ऐसे विवादों से बचने के लिए इस विषय के बारे में एक स्पष्ट उपबन्ध बना देना समुचित होगा जो यह सुनिश्चित करने के लिए हो कि अन्य हिताधिकारियों द्वारा लाए गए वाद में कुछ अन्य हिताधिकारियों का असंयोजन उस वाद को खारिज करने के लिए आधार नहीं होगा किन्तु न्यायालय डिक्री पारित करते समय डिक्री में ऐसे उपबन्ध कर सकता है जो वह असंयोजित हिताधिकारियों के हितों की संरक्षा करने के लिए न्यायोचित समझे।[3]

1. पी. बी. कादर बनाम थतचाम्मा, ए. आई. आर. केरल, 241, 246।
2. पिछला पैरा 1.2।
3. परिशिष्ट 1, खण्ड 4 (4) देखिए।

अध्याय 10

परिभाषाएं : धारा 4

परिभाषा का लोप किया जाना।

10.1. वर्तमान अधिनियम में परिभाषाएं अन्त में, अर्थात् धारा 4 में दी गई हैं। इसमें यह उपबन्धित है कि "व्यक्ति" शब्द राज्यिक और निगमित निकायों को लागू होता है। अब यह परिभाषा अपेक्षित नहीं है क्योंकि साधारण खण्ड अधिनियम, 1897 की धारा 3(42) में "व्यक्ति" शब्द की परिभाषा दी गई है जो प्रस्तावित नए अधिनियम को लागू होगी। इसलिए "व्यक्ति" शब्द की परिभाषा का लोप कर देना चाहिए (निकाल देना चाहिए)।

परिभाषाओं का लोप किया जाना।

10.2. वर्तमान अधिनियम में "सन्तान" शब्द की परिभाषा इस प्रकार की गई है कि इसके अन्तर्गत "सन्तान" और "जनक" पुत्र और पुत्री, पौत्र और पौत्री तथा सौतेला पुत्र और सौतेली पुत्री भी होंगे। इसमें "जनक" शब्द की भी परिभाषा इस प्रकार की गई है कि इसके अन्तर्गत पिता और माता तथा पितामह और मातामही भी होंगे। पहले उल्लिखित विचारों की दृष्टि से[1] इन परिभाषाओं का समुचित पुनः प्रारूपण अपेक्षित हो सकता है जिसके लिए हम अलग से सिफारिश कर रहे हैं।[2]

"क्षति" की परिभाषा का जोड़ा जाना।

10.3. यहां तक तो अधिनियम में पहले से की गई परिभाषाओं के बारे में है किन्तु कुछ नई परिभाषाओं को भी जोड़ना अपेक्षित है। पहली बात तो यह है कि 1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 1(6) के तरीके पर "क्षति" शब्द[3] की परिभाषा को अन्तः स्थापित करना आवश्यक है।

उपबन्धों के लिए की गई सिफारिश।

10.4. इसके अतिरिक्त निर्वचन की प्रकृति के कुछ अन्य उपबन्धों को भी अन्तःस्थापित करना निर्वचन के रूप में अन्य आवश्यक है जिसके लिए 1976 के इंगलिश ऐक्ट से सहायता ली जा सकती है। इनका सम्बन्ध निम्नलिखित बातों से है:—

(1) धर्मजत्व,[4] और
(2) विवाह सम्बन्ध द्वारा नातेदारी[5]

1. पिछला पैरा 5.4 (क)।
2. परिशिष्ट 1, खण्ड 2(1) ख और 2(2) देखिए।
3. परिशिष्ट 1, खण्ड 2(4)।
4. परिशिष्ट 1, खण्ड 2(2) और पिछला पैरा 5.5(ख) देखिए।
5. परिशिष्ट 1, खण्ड 2(3) देखिए।

अध्याय 11

नुकसानी में से कटौतियां

फायदों की कहां तक कटौती की जाए।

11.1 अभी कुछ ऐसे विषयों पर विचार-विमर्श करना बाकी रह गया है जिनकी चर्चा वर्तमान अधिनियम में नहीं की गई है। अब उन पर विचार किया जा सकता है।

पहला विषय तो नुकसानी में से कटौतियां करने का प्रश्न है। अधिनियम के अधीन नुकसानी का संदाय करने के लिए दायी व्यक्ति अक्सर यह तर्क करता है कि मृत्यु होने पर प्रोद्भूत होने वाले कुछ फायदों की कटौती मृत्यु के लिए नुकसानी का निर्धारण करने में से कर लेनी चाहिए। अन्य देशों में इस विषय की चर्चा विनिर्दिष्ट विधान द्वारा की गई है किन्तु भारत में अभी तक ऐसा नहीं किया गया है। इसके परिणाम-स्वरूप भारत में कुछ कठिन प्रश्न उत्पन्न होते हैं जिन पर विचार किया जाना आवश्यक है।[1]

1976 के इंगलिश ऐक्ट के अधीन नुकसानी में से कटौतियां करना अनुज्ञेय नहीं।

11 2 इंगलैंड में 1976 के फैटल एक्सीडेंटस ऐक्ट की धारा 4 द्वारा यह उपबन्धित था कि किसी व्यक्ति की मृत्यु के बारे में ऐक्ट के अधीन की गई कार्यवाही में नुकसानी का निर्धारण करने में किसी ऐसे बीमा धन, फायदे, पेंशन, उपदान (ग्रैच्युइटी) को, जिसका संदाय "मृत्यु के परिणामस्वरूप" किया गया है हिसाब में नहीं लिया जाएगा। इस ऐक्ट की धारा 4(2) में "बीमा धन" की परिभाषा ऐसे रूप में की गई थी कि इसके अन्तर्गत प्रीमियमों की वापसी भी है। "पेंशन" शब्द की परिभाषा के अन्तर्गत अंशदानों की वापसी और किसी एक मुश्त राशि का संदाय भी था।[2]

इंगलैंड में 1982 का संशोधन।

11.3 यह विस्तृत उपबन्ध 1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 4 में था। इंगलैंड में 1982 के संशोधन द्वारा धारा 4 के स्थान पर इससे सरल और अधिक व्यापक उपबन्ध रखा गया।[3] इंगलैंड में 1982 में प्रतिस्थापित धारा 4 अब निम्नलिखित रूप में है :—

> "4. **नुकसानी का निर्धारण : फायदों को हिसाब में न लिया जाना**
>
> किसी व्यक्ति की मृत्यु के बारे में इस ऐक्ट के अधीन की गई कार्यवाही में नुकसानी का अवधारण करने में उसकी मृत्यु के परिणामस्वरूप उसकी सम्पदा से या अन्यथा किसी व्यक्ति को जो फायदे प्रोद्भूत हो चुके हैं या जो होंगे या हो सकते हैं उनको हिसाब में नहीं लिया जाएगा।"

बीमा के बारे में भारतीय निर्णयजनित विधि।

11.4 भारत में अब यह भली भांति निश्चित हो चुका है कि मृतक के आश्रित को संदेय बीमा की रकम घातक दुर्घटना अधिनियम के अधीन संदेय नुकसानी में से काटी नहीं जा सकती।[4] किन्तु मृत्यु से प्रोद्भूत होने वाले अन्य फायदों के बारे में अक्सर प्रश्न उठते हैं। अतः यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रतिकर का निर्धारण करने में अनुग्रहपूर्वक (एक्सग्रेशिया) संदायों को हिसाब में नहीं लिया जाएगा। कुछ उच्च न्यायालय बीमा की समुचित रकम और उसकी 'वृद्धि' के बीच अच्छा विभेद करते हैं। बम्बई उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण है कि बीमा की रकम की कटौती नहीं की जानी है किन्तु वृद्धि की कटौती की जानी है।[5]

इसके पश्चात् कुटुम्ब पेंशन का प्रश्न उठता है। कर्नाटक उच्च न्यायालय के अनुसार कुटुम्ब पेंशन की कटौती के लिए हिसाब में अवश्य लेना चाहिए किन्तु भविष्य निधि (प्राविडेन्ट फण्ड) और उपदान (ग्रैच्यूइटी) को हिसाब में नहीं लिया जा सकता।[6]

---

1. आगे पैरा 11.4।
2. **पी काक बनाम एक्यूजमेंट इक्वीपमेन्ट कं. लि.** (1954) 2 आल इ आर. 689
3. एडमिनिस्ट्रेटिव आफ जस्टिस ऐक्ट, 1982 (इंगलैंड)।
4. **अमरजीत कौर** बनाम **बैनगार्ड इन्श्योरेंस कम्पनी** ए. आई. आर. 1982 दिल्ली। (पुनर्विलोकर के मामले)।
5. **हिरजी चिरजी एण्ड कं.** बनाम **सरोजा** ए. आई. आर. 1982 बम्बई 467 (फुल बेन्च)।
6. **डिप्टी जनरल मैनेजर, स्टेट रोड़ ट्रांस्पोर्ट कारपोरेशन** बनाम **एच सरोजमा** ए. आई. आर. 1981 कर्नाटक 129

कटौतियों के बारे में सिफारिश।

11.5 हमारे विचार में इन सब विवादों से बचना चाहिए। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि (यथा-संशोधित)[1] इंगलिश ऐक्ट की धारा 4 को भारत में उपयोगी रूप से अपनाया जा सकता है। इसके साथ ही **विनिर्दिष्ट रूप से** (भारतीय अधिनियम में) यह उपबन्धित करना समुचित प्रतीत होता है कि 1976 के इंगलिश ऐक्ट में (1982 में किए गए उसके संशोधन से पहले)[2] विनिर्दिष्ट रूप से उल्लिखित फायदों की भी कटौती नहीं की जानी है जिससे कि इन बातों के बारे में विभिन्न न्यायालयों में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण अपनाए जाने की सम्भावना उत्पन्न न हो सके। मृत्यु होने पर प्रोद्भूत होने वाले फायदों के विषय में ऐसा व्यापक उपबन्ध महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में स्थिति को तय कर देगा।

व्यापक सिफारिश।

11.6 हम तदनुसार एक सर्वग्राही उपबन्ध[3] के लिए सिफारिश कर रहे हैं जिसमें न्यायालय से मृत्यु पर प्रोद्भूत होने वाले सभी फायदों को हिसाब में न लेने की अपेक्षा की जाती है और जिसमें यह भी विनिर्दिष्ट रूप से उपबन्धित हो कि प्रस्तावित उपबन्ध में विनिर्दिष्ट रूप से प्रगणित फायदों को अधिनियम के अधीन संदेय नुकसानी का निर्धारण करने में हिसाब में नहीं लिया जाएगा।

---

1. पिछला पैरा 11.3।
2. पिछला पैरा 11.2।
3. परिशिष्ट 1, खण्ड 7 देखिए।

अध्याय 12

उत्तराधिकार प्रमाणपत्र

केरल का एक मामला।

12.1 इस प्रक्रम पर उत्तराधिकार प्रमाणपत्र की स्थिति के संबंध में विचार विमर्श करना वांछनीय है। अभी हाल में ही रिपोर्ट किए गए केरल के एक मामले में एक विधवा ने, जिसके पति की मृत्यु केरल स्टेट रोड ट्रांस्पोर्ट की बस के ड्राइवर की उपेक्षा से कारित हुई थी, प्रतिकर के लिए जो दावा किया था उसका प्रतिवाद कारपोरेशन ने किया था। कारपोरेशन ने इस बात पर जोर दिया था कि विधवा को प्रतिकर का संदाय किए जाने से पहले उसे उत्तराधिकार प्रमाणपत्र प्रस्तुत करना चाहिए। इस इन्कार से व्यथित होकर विधवा ने केरल उच्च न्यायालय में एक पत्र द्वारा अपील की थी जिस पत्र को अर्जी मान लिया गया था। उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में यह बात बतायी कि विधवा ने अपने पति की सम्पदा की उत्तराधिकारिणी के रूप में दावा नहीं किया था बल्कि अपने ही बल पर दावा किया था। इसलिए इस मामले में उत्तराधिकार-प्रमाणपत्र की आवश्यकता नहीं थी। उच्च न्यायालय ने इस बात को विस्तार से स्पष्ट करते हुए निम्नलिखित मत प्रकट किया था।[1]

> "यह उपधारणा कि दुर्घटना के कारण जिस व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है उसके आश्रितों को प्रतिकर के संदाय के लिए उत्तराधिकार प्रमाणपत्र आवश्यक होता है स्पष्टतः ठीक नहीं है। **स्टेट इन्श्योरेन्स आफिसर** बनाम **थक्कम्मा** (1980) केरल एल० टी० 562 में इस न्यायालय के दो विनिश्चयों में भारतीय घातक दुर्घटना अधिनियम के बारे में उल्लेख किया गया है।
>
> "यह स्पष्ट है कि उक्त अधिनियम इस उद्देश्य से लागू किया गया था कि जिस व्यक्ति की मृत्यु दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम से हुई है उसके आश्रित व्यक्ति प्रतिकर के लिए दावा करने में समर्थ हो सकें। यदि उक्त अधिनियम लागू न होता तो मृतक के वारिस दोषपूर्ण कार्य से कारित मृत्यु के लिए प्रतिकर का दावा करने का मामला नहीं चला सकते थे। इस स्थिति का सामना करने के लिए घातक दुर्घटना अधिनियम अधिनियमित किया गया है। यह आश्रितों को, अर्थात् जिस व्यक्ति की मृत्यु कारित हुई है उसकी पत्नी, पति, जनक और सन्तान से, ऐसी मृत्यु के परिणाम स्वरूप हुई हानि के लिए दावा करने के लिए समर्थ बनाता है।"

उत्तराधिकार पर आधारित दावे की स्थिति।

12.2 इसी सिलसिले में उच्च न्यायालय ने केरल के इसी मामले में[2] **उत्तराधिकार के आधार पर** किए जाने वाले दावे के लिए अपेक्षित उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के बारे में निम्नलिखित मत प्रकट किया था :—

> **"विधान मण्डल को इस विषय के बारे में कार्रवाई करनी है** जिससे कि कम से कम इतनी बात तो हो कि उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के बिना छोटी धनराशि का ऐसा संदाय किया जा सके जो ऋणी व्यक्ति को उन्मुक्ति देने के लिए अपेक्षित है। हम इस मामले में इस प्रश्न पर विचार नहीं करेंगे क्योंकि हमारा यह विचार है कि हम इस मामले में अर्जीदार को अन्यथा भी राहत दे सकते हैं।"

विनिर्दिष्ट उपबन्ध की आवश्यकता नहीं।

12.3 हमने इस प्रश्न पर विचार किया है कि क्या घातक दुर्घटना अधिनियम में यह उपबन्ध प्रविष्ट करना आवश्यक है कि इस अधिनियम के अधीन दावा के लिए कोई उत्तराधिकार प्रमाणपत्र अपेक्षित नहीं होगा? हमारे विचार में यह बात स्पष्ट है और यदि हम कहना चाहें तो यह कह सकते हैं कि[3] ऊपर उद्धृत मामले में केरल स्टेट रोड ट्रांस्पोर्ट कारपोरेशन ने जो आपत्ति की है उससे यह प्रकट होता है कि वह विधि के बारे में पूर्णतया भ्रम में है। इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती कि कोई (पब्लिक या प्राइवेट) कारपोरेशन, जिसे समुचित सलाह दी गई है, ऐसी आपत्ति कर सकता है। इसलिए हम उपयुक्त बातों के बारे में इस समय तो किसी स्पष्टीकारक उपबन्ध का प्रस्ताव नहीं कर रहे हैं।

---

1. **कोचुपेन्नू लक्ष्मी** बनाम, **चेयरमैन, केरल स्टेट रोड ट्रांस्पोर्ट कारपोरेशन**, ए. आई. आर. 1984 केरल 97, 99 पैरा 5 (जून)।
2. **कोचुपेन्नू लक्ष्मी** बनाम, **चेयरमैन, केरल स्टेट रोड ट्रांस्पोर्ट कारपोरेशन**, ए. आई. आर. 1984 केरल 97, 99 पैरा 4 (जून)।
3. पिछला पैरा 12.2।

अध्याय 13

कार्य-संचालन पत्र के बारे में प्राप्त आलोचनाएं

13.1 जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है[1], आयोग ने इस विषय के बारे में एक कार्य संचालन पत्र तैयार किया है और प्रायोगिक प्रस्तावों पर आलोचनाएं भेजने के लिए अनुरोध किया था। कार्य संचालन पत्र के बारे में तीन आलोचनाएं प्राप्त हुई हैं।

आलोचनाओं की प्रवृत्ति।

13.2 हिमाचल प्रदेश की राज्य सरकार[2] और कर्नाटक की राज्य सरकार[3] से जो आलोचनाएं प्राप्त हुई हैं उनमें आयोग के उन प्रस्तावों से सहमति प्रकट की गई है जो कार्य संचालन पत्र में दिए गए हैं (जो पर्याप्त रूप में वैसे ही हैं जैसे कि वे इस रिपोर्ट के अगले अध्याय में दिए गए हैं)।

कार्य संचालन पत्र से सहमत आलोचनाएं।

परिमाण सम्बन्धी नीति के बारे में आलोचना।

13.3 एक व्यक्ति[4] से कार्य संचालन पत्र के बारे में प्राप्त आलोचना में यह सुझाव दिया है कि घातक दुर्घटना बीमा पालिसी की रकम को जीवन-निर्वाह के खर्चे में वृद्धि की दृष्टि से बढ़ा देना चाहिए। इस प्रसंग में हम यह बता देना चाहते हैं कि घातक दुर्घटना अधिनियम में न तो बीमा पालिसी की रकम की और न प्रतिकर के परिमाण की चर्चा है। परिमाण की बात न्यायालय द्वारा नियत करने के लिए छोड़ दी गई है जो सभी सुसंगत तथ्यों को सम्यक् रूप से ध्यान में रखकर तय करेगा।

---

1. पिछला पैरा 1.12।
2. विधि आयोग की फाइल सं. 2(1)/85 एल सी क्रम सं. 12।
3. विधि आयोग की फाइल सं. 2(1)/85-एल सी सं. 15।
4. विधि आयोग की फाइल सं. 2(1)/85-एल. सी. सं. 16 (श्री एन. सी. साइमन्स, अनकमाल, विशाखापट्टनम जिला)।

अध्याय 1

पुनरीक्षित अधिनियम के लिए की गई सिफारिश

पुनरीक्षित अधिनियम के लिए की गई सिफारिश, किन्तु उसके भूतलक्षी प्रभाव नहीं ।

14.1 यदि हमारी उन सिफारिशों को, जो पिछले अध्यायों में की गई हैं, स्वीकार कर लिया जाता है तो इस अधिनियम में परिवर्तन करने की दृष्टि से एक पुनरीक्षित अधिनियम (संशोधक अधिनियम की अपेक्षा) अधिक सुगम होगा । इस पुनरीक्षित अधिनियम का भूतलक्षी प्रभाव नहीं होना चाहिए[1] जिसके लिए कारण पहले ही बताए जा चुके हैं ।[2]

परिशिष्ट 1 में सिफारिश ।

14.2 हम परिशिष्ट 1 विधेयक का प्रारूप संलग्न कर रहे हैं । इसके अनेक खण्डों में उन विभिन्न बातों को मूर्त रूप में दिखाने की चेष्टा की गई है जो पिछले अध्यायों में बताई गई हैं ।

परिशिष्ट 2-3 ।]

14.3 परिशिष्ट 2 में एक तुलनात्मक सारिणी दी गई है जिसमें वर्तमान अधिनियम की धारा और हमारे द्वारा परिकल्पित विधेयक के प्रारूप में सिफारिश किया गया तत्समान उपबन्ध दिखाया गया है ।

परिशिष्ट 3 में उन चुने हुए भारतीय कानूनी उपबन्धों की सूची दी गई है जिसमें मृत्यु होने की दशा में प्रतिकर के लिए उपबन्ध किया गया है ।

हस्ता०
(के०के० मैथ्यू)
अध्यक्ष

हस्ता०
(जे० पी० चतुर्वेदी)
सदस्य

हस्ता०
(डा० एम०बी० राव)
सदस्य

हस्ता०
(पी०एम० बख्शी)
अंशकालिक सदस्य

हस्ता०
(वेपा० पी० सारथी)
अंशकालिक सदस्य

हस्ता०
(एस० रमैय्या)
सदस्य-सचिव

तारीख 16 मई, 1985

1. परिशिष्ट 1, खण्ड 1(3) ।
2. पिछला पैरा 3.2 देखिए ।

परिशिष्ट 1

विधेयक का प्रारूप

विधेयक के प्रारूप के लिए सिफारिश

खण्डों का विन्यास

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार, प्रारम्भ और लागू होना ।
2. निर्वचन ।
3. दोषपूर्ण मृत्यु के लिए वाद का अधिकार ।
4. नातेदारों के फायदे के लिए वाद ।
5. केवल एक वाद की अनुमति ।
6. क्षति के अनुपात में नुकसानी ।
7. हिसाब में न लिए जाने वाले फायदे ।
8. सम्पदा की हानि के लिए दावा ।
9. न्यायालय में संदत्त धन ।
10. प्रतिकर का प्रभाजन ।
11. वादपत्र और शपथपत्र ।
12. न्यायालय की शक्ति ।
13. दावा से पहले दायित्व के प्रश्न का अवधारण ।
14. निरसन ।

दोषपूर्ण मृत्यु विधेयक, 1985

प्रारम्भिक

संक्षिप्त नाम, विस्तार, प्रारम्भ और लागू होना ।

1. (1) इस अधिनियम का नाम दोषपूर्ण मृत्यु अधिनियम, 1985 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू और कश्मीर राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है ।

1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 7(2) से तुलना कीजिए ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस निमित्त नियत करे किन्तु यह ऐसे किसी वाद-हेतुक को लागू नहीं होगा जो इसके प्रारम्भ से[1] पहले हुई मृत्यु से उत्पन्न होता हो ।

निर्वचन ।

2. इस अधिनियम में, जब तक संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो :—

(भागतः धारा 4)

(क) "सन्तान" के अन्तर्गत पुत्र, पुत्री[2], पोत्र, पोत्री, **दत्तक सन्तान[3] और वह व्यक्ति भी है जिसके लिए मृतक जनक की स्थिति में था;**

(भागतः धारा 4)

(ख) "जनक" के अन्तर्गत पिता, माता, पितामह, मातामही, **सौतेला पिता, सौतेली माता, वह व्यक्ति जिसने सन्तान[4] का दत्तक ग्रहण किया है और वह व्यक्ति भी है जो मृतक के जनक की स्थिति में था[5] ।**

1. पैरा 3.2 देखिए ।
2. सौतेली सन्तान के बारे में आगे खण्ड 2(3) देखिए ।
3. पैरा 5.5(ख) और 10.1 देखिए ।
4. पैरा 5.5(ग) देखिए ।
5. पैरा 1.2 देखिए ।

फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट 1976 (इंगलिश) की धारा, 2, 1 (5) (ख) से अब तुलना कीजिए ।

(2) इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए अधर्मज व्यक्ति को अपनी माता और तथा कथित पिता की धर्मज सन्तान माना जाएगा ।[1]

फैटल एक्सीडेन्ट्स ऐक्ट, 1976 (इंगलिश) की धारा 1(5) (क) से तुलना कीजिए ।

(3) इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए किसी नातेदारी का पता लगाने में विवाह सम्बन्ध द्वारा नातेदारी को रक्त सम्बन्ध द्वारा नातेदारी मानी जाएगी, अर्द्धरक्त की नातेदारी को पूर्ण रक्त की नातेदारी मानी जाएगी और किसी व्यक्ति की सौतेली सन्तान को उसकी सन्तान मानी जाएगी ।[2]

1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 6 से तुलना कीजिए ।

(4) इस अधिनियम में क्षति के प्रति किसी निर्देश के अन्तर्गत उसके कारण किसी व्यक्ति का कोई रोग और उसकी शारीरिक या मानसिक स्थिति का कोई ह्रास भी है ।[3]

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 99 (ix) से तुलना कीजिए ।

(5) इस अधिनियम में नातेदारी को अभिव्यक्त करने वाले सभी शब्द गर्भ में ऐसी सन्तान को भी लागू होते हैं जो मृतक की मृत्यु के पश्चात जीवित अवस्था में जन्म लेती है ।[4]

दोषपूर्ण मृत्यु के लिए वाद का अधिकार

दोषपूर्ण मृत्यु के लिए वाद का अधिकार (धारा 1क का पहला पैरा) ।

3. यदि किसी ऐसे दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम से किसी व्यक्ति की मृत्यु कारित हुई है, जो ऐसा है कि[5] (यदि मृत्यु न हुई होती तो) क्षतिग्रस्त व्यक्ति को[6] उसके बारे में वाद लाने और नुकसानी वसूल करने के लिए हकदार बना देता तो वह व्यक्ति, जो यदि मृत्यु न हुई होती तो दायी होता, अपने विरुद्ध वाद लाए जाने के लिए इस बात के बावजूद दायी होगा कि क्षतिग्रस्त व्यक्ति की मृत्यु हो गई है और भले ही मृत्यु ऐसी परिस्थितियों में कारित हुई हो जो विधि में आपराधिक मानव-वध या किसी अन्य अपराध की कोटि में आता हो ।[7-8]

नातेदारों के फायदे के लिए बाद (धारा 1क का दूसरा पैरा भागत : रूप में) ।

4.1 इस अधिनियम के अधीन लाया गया प्रत्येक वाद उस व्यक्ति के, जिसकी मृत्यु इस प्रकार कारित हुई थी, उन नातेदारों के फायदे के लिए होगा जो उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट किए गए हैं और इसके पश्चात् यथा उपबन्धित के सिवाय ऐसा वाद मृतक के निष्पादक या प्रशासक के द्वारा और नाम में लाया जाएगा ।[9]

1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 2(2) से तुलना कीजिए ।

(2) यदि—

(क) मृतक का कोई निष्पादक या प्रशासक नहीं है, या

(ख) मृत्यु के पश्चात् छह मास के अन्दर कोई वाद मृतक के निष्पादक या प्रशासक के द्वारा या नाम में नहीं लाया जाता है,

तो उपधारा (3) में[10] विनिर्दिष्ट सभी नातेदारों या उनमें से किसी एक नातेदार के द्वारा या नाम में वाद लाया जा सकता है ।

---

1. पैरा 5.5(ख) और 10.4 (i) देखिए ।
2. पैरा 5.5(ख) और पैरा 10.4(ii) देखिए ।
3. पैरा 10.3 देखिए ।
4. पैरा 5.6 देखिए ।
5. 1976 के इंगलिश ऐक्ट के प्रारूपण में सुधार किए जाने का लाभ उठाकर शाब्दिक सुधार किए गए हैं ।
6. क्षति के प्रति निर्देश के लिए खण्ड 3(4) देखिए ।
7. धारा 1 क में विद्यमान "घोर अपराध या अन्य अपराध" शब्द अब अनुपयुक्त हो गए हैं । अतः शब्द बदल दिए गए हैं ।
8. पैरा 4.6 देखिए ।
9. पैरा 5.5 देखिए ।
10. पैरा 5.9 देखिए ।

(3) इस धारा में निर्दिष्ट नातेदार निम्नलिखित हैं, अर्थात्[1] :—

(क) पत्नी या पति,

(ख) सन्तान[2],

(ग) पुत्रवधु, यदि विधवा हो[3],

(घ) जनक[4]

(ङ) भाई और भाई की सन्तान[5],

(च) भाई की विधवा[6],

(छ) बहन और बहन की सन्तान[7]

(ज) चाचा (अंकिल) और चाचा (अंकिल) की सन्तान[8]

(झ) चाची (आन्ट) और चाची (आन्ट) की संतान ।[9]

(4) इस अधिनियम के अधीन वाद में आश्रितों में से कुछ व्यक्तियों का असयोजन अन्य आश्रितों द्वारा लाए गए वाद को खारिज करने के लिए आधार नहीं होगा किन्तु ऐसे वाद में न्यायालय डिक्री पारित करते समय ऐसे उपबन्ध कर सकता है जो वह उन आश्रितों की संरक्षा करने के लिए न्यायसंगत समझे जो अभिलेख में नहीं हैं ।[10]

5. उसी वाद-हेतुक के लिए और उसी की बाबत एक से अधिक वाद नहीं लाया जाएगा ।[11-12]

केवल एक वाद के लिए अनुमति (धारा 2 का पहला पैरा) क्षति के अनुपात में नुकसानी ।

6. (1) इस अधिनियम के अधीन वाद में, ऐसी नुकसानी दिलायी जाएगी जो नातेदारों को मृत्यु के परिणामस्वरूप होने वाली क्षति के आनुपातिक हो और इस प्रकार से वसूल की गई रकम का विभाजन, उसमें से उस खर्चे की कटौती करके जो प्रतिवादी से वसूल नहीं किया गया है, नातेदारों के बीच ऐसे अंशों में किया जाएगा जैसा कि न्यायालय द्वारा निदेश दिया जाए ।[13]

1982 में यथासंशोधित 1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 3(3) के विपरीत ।

(2) इस अधिनियम के अधीन वाद में विधवा को उसके पति की मृत्यु की बाबत संदेय नुकसानी का निर्धारण करने में :—

(क) विधवा के पुनर्विवाह की सम्भावनाओं को हिसाब में नहीं लिया जाएगा,[14]

(ख) किन्तु उसके पुनर्विवाह को हिसाब में लिया जाएगा ।[14]

1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 3(5) से तुलना कीजिए ।

(3) यदि आश्रितों ने मृतक की अन्त्येष्टि के लिए व्यय किए हैं तो उन व्ययों की बाबत नुकसानी इस धारा के अधीन दिलायी जा सकती है ।[15]

(4) मूर्त और अमूर्त हानि के लिए इस धारा के अधीन नुकसानी दी जा सकती है ।[16]

---

1. पैरा 5.5 देखिए ।
2. खण्ड 2(1)(क) देखिए—"सन्तान" ।
3. पैरा 5.5 (छ) ।
4. खण्ड 2(1) (ख) देखिए—"जनक" ।
5. पैरा 5.5 (क) ।
6. पैरा 5.5(ज) ।
7. पैरा 5.5 (ङ) ।
8. पैरा 5.5 (च) ।
9. पैरा 9, 7 देखिए ।
10. घातक दुर्घटना अधिनियम के अधीन वाद की परिसीमा की कालावधि परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 82 के अधीन दो वर्ष है (परिसीमा अधिनियम, 1908 के अनुच्छेद 21 के अधीन यह कालावधि एक वर्ष थी) ।
11. पैरा 8.2 देखिए ।
12. पैरा 6.5 देखिए ।
13. पैरा 7.12 देखिए ।
14. पैरा 6.6 देखिए ।
15. पैरा 6.3 और पैरा 6.4 देखिए ।

मृत्यु हो जाने पर प्रोद्भूत होने वाले फायदों को हिसाब में न लिया जाना।

7. (1) इस अधिनियम के अधीन वाद में किसी व्यक्ति के मृत्यु की बाबत नुकसानी का निर्धारण करने में ऐसे किसी फायदे को हिसाब में नहीं दिया जाएगा जो मृत्यु के परिणामस्वरूप प्रोद्भूत हुआ है या होगा या हो सकता है।[1]

(2) इस धारा में—

(क) "फायदे" से किसी आश्रित को मृत्यु के परिणामस्वरूप प्रोद्भूत होने वाला प्रत्येक अभिलाभ अभिप्रेत है, चाहे वह मृतक की सम्पदा से विरासत में मिला हो या मृत्यु के परिणामस्वरूप किसी अन्य रीति से प्रोद्भूत हुआ हो और इसके अन्तर्गत कोई बीमा धन, पेंशन या उपदान या सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित किसी स्कीम के अधीन कोई फायदा भी है और इसके अंतर्गत किसी प्रवृत्त अधिनियमिति के अधीन संदाय तथा संगम (एसोसिएशन) या ट्रेड यूनियन (व्यवसाय-संघ या मजदूर संघ) द्वारा अपने किसी सदस्य के आश्रित व्यक्ति को राहत या भरण-पोषण के लिए कोई संदाय भी है।

(ख) "बीमा धन" के अन्तर्गत प्रीमियम की वापसी भी है।

(ग) "पेंशन" के अन्तर्गत अंशदान की वापसी और किसी व्यक्ति के नियोजन की बाबत एकमुश्त राशि का संदाय भी है।

सम्पदा की हानि के लिए दावा (धारा 2 का दूसरा पैरा)।

8. ——————इस अधिनियम के अधीन किसी वाद में वादी मृतक की सम्पदा को ऐसे दोषपूर्ण कार्य, उपेक्षा या व्यतिक्रम के कारण हुई किसी धन संबंधी हानि के लिए दावा विनिर्दिष्ट कर सकता है और उसे वसूल कर सकता है और वह राशि वसूल होने पर मृतक की सम्पदा की आस्तियों का भाग समझी जाएगी।[2]

संदाय और प्रभाजन

न्यायालय में संदत्त धन।

9. इस अधिनियम के अधीन वाद-हेतुक की तुष्टि के लिए न्यायालय में संदत्त धन नातेदारों के अंशों के विनिर्दिष्ट किए बिना एकमुश्त राशि के रूप में हो सकता है।[3]

1976 के इंगलिश ऐक्ट की धारा 3(4) से तुलना कीजिए।

10. (1) जहां कि प्रतिकर का अन्यथा प्रभाजन नहीं किया गया है वहां न्यायालय उसे हकदार व्यक्तियों के बीच प्रभाजित कर सकता है।

(2) न्यायालय ऐसे धन का, जिसके लिए अवयस्क (माइनर) हकदार है, वितरण अपने विवेकानुसार मुल्तवी कर सकता है और अविभाजित निधि में से संदाय करने के लिए निदेश दे सकता है।[4]

प्रक्रिया

वादपत्र और शपथ पत्र (धारा 3)।

11. (1) इस अधिनियम के अधीन वाद में वादी अपने वाद में उन व्यक्तियों के बारे में बताएगा जिनके लिए या जिनकी ओर से ऐसा वाद लाया जाए और उचित विस्तार के साथ उस हानि को भी वर्णित करेगा जो ऐसे व्यक्तियों में से प्रत्येक ने उठायी है।[5]

(2) ऐसे वाद में वादी द्वारा वादपत्र के साथ ऐसा शपथपत्र फाइल किया जाएगा जिसमें वह यह कथन करेगा कि जिन व्यक्तियों की ओर से, जैसा कि वादपत्र में उनके बारे में बताया गया है, वे वादी के सर्वोत्तम ज्ञान, जानकारी और विश्वास में केवल वही व्यक्ति हैं जो उसके फायदे के लिए हकदार हैं या हकदार होने का दावा करते हैं।[6]

1. पैरा 11.4 और पैरा 11.6
2. पैरा 8.6 देखिए।
3. पैरा 5.5 और पैरा 5.10 देखिए।
4. पैरा 6.7 देखिए।
5. पैरा 9.3 देखिए।
6. पैरा 9.4 देखिए।

(3) यदि उस न्यायालय की, जिसमें वाद संस्थित किया जाता है, यह राय है कि उपधारा (2) द्वारा अपेक्षित शपथपत्र फाइल किए जाने को छोड़ दिए जाने के लिए पर्याप्त कारण हैं तो वह ऐसा कर सकता है।[1]

कुछ प्रश्नों का अवधारण करने के लिए न्यायालय की शक्ति। (नया)

12. जहां कि इस अधिनियम के अधीन हकदार होने का दावा करने वाले दो या दो से अधिक व्यक्तियों द्वारा या वहां वह न्यायालय, जिसमें ऐसे वाद या उन वादों में से कोई वाद या एक वाद लम्बित है, प्रतिवादी के केवल दायित्व के प्रश्न का ही नहीं बल्कि यदि कोई नुकसानी वसूल की जा सकती हो तो उसके लिए इस अधिनियम के अधीन हकदार व्यक्तियों से सम्बन्धित सभी प्रश्नों का भी अवधारण करने के लिए ऐसा आदेश कर सकता है जो वह न्यायसंगत समझे।[2]

दावे के अवधारण से पहले दायित्व के प्रश्न का अवधारण। (नया)

13. इस अधिनियम के अधीन प्रत्येक वाद में :—

(क) विशिष्ट दावेदार के हित के प्रश्न का विनिश्चय किए जाने से पहले दायित्व के प्रश्न का अवधारण किया जाएगा;

(ख) तब न्यायालय दावों को ग्रहण करेगा और प्रत्येक दावे की रकम निर्धारित करेगा;

(ग) न्यायालय अन्य और दावे किए जाने के लिए अवसर प्रदान करेगा;

(घ) तब न्यायालय निर्णय सुनाएगा;

(ङ) निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् प्रतिवादीगण किसी ऐसे अन्य व्यक्ति के प्रति दायी नहीं होंगे जो इस प्रकार मरने वाले व्यक्ति के जीवित रहने में हितबद्ध होने का दावा करता हो।[3]

निरसन।

14. (1) इसके द्वारा घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 निरसित किया जाता है।

(2) साधारण खण्ड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना इस धारा की कोई बात इस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व हुई मृत्यु से उत्पन्न होने वाले वाद-हेतुक के बारे में घातक दुर्घटना अधिनियम, 1855 के लागू होने पर प्रभाव नहीं डालेगी।[4]

1. पैरा 9.4 देखिए।
2. पैरा 9.5 देखिए।
3. पैरा 9.6 देखिए।
4. पैरा 3.2 देखिए।

परिशिष्ट 2

सिफारिश किए गए विधेयक के प्रभाव में विद्यमान अधिनियम की धारा के तत्स्थान खण्ड दर्शित करने वाली तुलनात्मक सारिणी

विद्यमान धारा	प्रस्तावित खण्ड
धारा 1	1
धारा 1क, पहला पैरा	3
धारा 1क, दूसरा पैरा	4(1), 4(2)
धारा 1क, तीसरा पैरा	6(1)
धारा 2, पहला पैरा	5
धारा 2, दूसरा पैरा	8
धारा 3	11
धारा 4, "जनक" की परिभाषा से संबंधित भाग	2(1) (ख)
धारा 4, "सन्तान" की परिभाषा से संबंधित भाग	2(1)(1)
धारा 4, "व्यक्ति" की परिभाषा से संबंधित भाग	लोप कर दिया गया।

परिशिष्ट 3

मृत्यु होने पर प्रतिकर का उपबन्ध करने वाले कतिपय कानूनी उपबन्धों की सूची

1. भारतीय रेल अधिनियम, 1890 की धारा 82क।
2. कमकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 8 (5) के साथ पठित धारा 4 (1)।
3. नियोजक दायित्व अधिनियम, 1938 (1938 का 24) की धारा 3 का अन्तिम पैरा।
4. मोटर यान अधिनियम, 1939 की धारा 95 (1) (ख), धारा 96 और धारा 102।
5. कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 (1948 का 34) की धारा 53।
6. वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम, 1958 की धारा 346, धारा 347 और धारा 352।
7. वायु मार्ग द्वारा वहन से संबंधित विधान।

85-M/B(D)428MofLJ&CA—310—12-9-86—GIPS